THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY

OU_180583

UNIVERSAL LIBRARY

पिंजर

पिंजर

अमृता प्रीतम

प्रगति प्रकाशन
१४ डी, फ़ीरोज़शाह रोड,
नयी दिल्ली।

प्रथम संस्करण १९५२
द्वितीय संस्करण १९५२
प्रोग्रेसिव पबलिशर्ज़, १४ डी, फ़ीरोज़शाह रोड,
नयी दिल्ली द्वारा प्रकाशित और श्यामकुमार
गर्ग द्वारा हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस, क्वीन्स रोड, दिल्ली में मुद्रित।

१९३५

मटमैला दिन था। बोरी के एक टुकड़े पर बैठी पूरो मटर छील रही थी। उंगलियों में पकड़ी हुई फली के मुँह को खोल कर जब उसने दानों को मुट्ठी में सरकाना चाहा तो एक सफेद कीड़ा उसके अंगूठे पर लग गया।

जैसे एकाएक कीचड़ भरे गड्ढ में पाँव जा पड़ने पर एक सिहरन-सी हो उठती है वैसी ही सिहरन पूरो के सारे शरीर में दौड़ गयी। हाथ झटका कर उसने कीड़े को परे फेंक दिया और अपने हाथों को अपने घुटनों में भींच लिया।

पूरो के सामने मटर की फलियां, निकाले हुए दाने और खाली छिलके बिखरे पड़े रहे। उसने जोड़े हुए घुटनों के बीच में से दोनों हाथ निकाल कर अपने कलेजे को थाम लिया। उसे लगा मानो सिर से पाँव तक उसका शरीर मटर की उस फली की भाँति हो जिसके

भीतर मटर के स्वच्छ दानों के स्थान पर कोई गन्दा कीडा पल रहा है।

पूरो को अपने शरीर के अग-अग से घिन आने लगी। उसका मन चाहा कि वह अपने पेट में पल रहे कीड़े को झटकार दे, उसे अपने शरीर से दूर झाड़ दे, ऐसे जैसे कोई चुभे हुए कांटे को नाखूनों में फसा कर निकाल देता है, जैसे कोई धसे हुए गोखरू को उखाड़ कर फेक देता है, जैसे कोई चिमटी हुई किलनी को नोच कर अलग कर देता है जैसे कोई चिपटी हुई जोंक को तोड़ फेकता है।

पूरो सामने दीवार की ओर देखने लगी। बीते हुए दिन एक-एक करके वहाँ से गुजर रहे थे।

पूरो गुजरात जिले के एक गाँव छत्तोआनी के शाहो की बेटी थी—शाह, जिनका साहूकारे का काम कब का बन्द हो चुका था, किन्तु फिर भी वह कहलाते शाह ही थे। समय के कुचक्र से शाहों के उस घर का यह हाल हो गया कि देग और कडाल जैसे उनके बड़े-बड़े बरतन भी बिक गये—वे बरतन जिन पर उनके पूर्वजों के नाम खुदे हुए थे। प्रति दिन की इस जीती-जागती ग्लानि से बचने के लिए पूरो के पिता और चाचा अपना गाँव छोड़ कर सियाम चले गये। वहाँ उनके दिन पलक मारते ही पलट गये।

उन दिनों पूरो दौडती फिरती थी और उसकी मां की गोद में एक लड़का था। उजड़े हुए शाहों का यह परिवार फिर अपने गाँव छत्तोआनी आया। पूरो के पिता ने अपना गिरवी पड़ा हुआ मकान छुड़वा कर अपने बाप-दादों के नाम की लाज रख ली, यद्यपि उसके पिता को नया मकान बनवाने में इससे भी कम पैसे खरचने पड़ते, पर उसने अधाधुंध लगाये हुए ब्याज की भी परवाह न की और एक बार दांत भींच कर अपने पूर्वजों के नाम की रक्षा कर ली।

अनाज चारा और अन्य वस्तुओं की ठीक-ठीक व्यवस्था कर के वह सयाम चले गये, किन्तु अब उन का मकान, उन का नाम, उन के पीछे गाँव में रहता रहा। अगली बार जब वह अपने गाँव लौटे, उस समय पूरो पूरे चौदह वर्ष की थी। उससे छोटा उसका एक भाई था, उससे छोटी पूरो की ऊपर तले की तीन बहिनें थी, और अब के पूरो की माँ को छठी बार फिर किसी बच्चे की उम्मीद थी।

शाहों के उस परिवार ने गाँव आकर पहला काम किया कि पास के गाँव रत्तोवालके एक अच्छे खाते-पीते घर में पूरो के लिए लड़का देखा। पूरो की माँ सोचती थी कि जब वह नहा धो कर उठेगी तो बड़े चाव से पूरो का काज आरंभ करेगी। इस बार वह पक्की तरह सोच कर आये थे कि इस भार को उतार कर ही लौटेंगे।

पूरो की होने वाली ससुराल में उन दिनों तीन दुधार पशु थे, और गांव में उनका मकान पहला था जिसके ऊपर पक्की ईंटों की बरसाती बनी हुई थी। मकान के माथे पर उन्होंने "ओं" लिखवाया हुआ था। लड़का सूरत का अच्छा और बुद्धिमान दीख पड़ता था।

पूरो के पिता ने पाच रुपये और गुड़ की भेली देकर लड़का रोक लिया था। उन दिनो गुजरात जिले में अदला-बदली के संबंध होते थे। जिस लड़के से पूरो की सगाई हुई, उस लडके की बहन की सगाई पूरो के भाई के साथ की गयी, यद्यपि पूरो का भाई उस समय मुश्किल से बारह बरस का था और उसकी मंगेतर बहुत ही छोटी थी।

दो-दो बरस के अन्तर से ऊपर तले तीन लड़कियों को जन्म देने के कारण पूरो की माँ का मन क्षुब्ध-सा हो गया था। अब जब कि उनके दिन फिर गये थे, घर मे मन-भर खाने को था, जी-भर पहनने को था, उसका मन करता था कि उसके फिर एक लड़का हो।

इस बार आकर पूरो की माँ ने दूसरा काम यह किया कि विधि-

माता की पूजा की। गाव की कुछ स्त्रियो ने पूरो के घर के आँगन में गोबर की एक गुड़िया बनायी, लाल चुनरी के किनारी लगाकर उसे उस गुड़िया के सिर पर उढ़ा दिया, दो माशे सोने की छोटी-सी नथ बनवा कर उसकी नाक में डाली, और सब ने मिलकर गाया—

बिधमाता रुस्सी आवीं ते मन्नी जावीं,
बिधमाता रुस्सी आवीं ते मन्नी जावीं ।

उनके अपने गाँव में और आस-पास के गाँवों मे स्त्रियों का यह विश्वास था कि प्रत्येक बालक के जन्म के समय विधिमाता स्वयं आती है। यदि विधिमाता अपने पति से हंसती खेलती आती है तो आकर झटपट लड़की बनाकर चली जाती है क्योकि उसे अपने पति के पास लौटने की जल्दी होती है। किन्तु यदि विधिमाता अपने पति से रूठ कर आती है तो उसे लौटने की कोई विशेष जल्दी नो होती नही, वह आ कर बहुत समय तक बैठती है और आराम से लड़का बनाती है। सो सब स्त्रियों ने मिलकर फिर गाना आरभ किया—

बिधमाता रुस्सी आवीं ते मन्नी जावीं,
बिधमाता रुस्सी आवीं ते मन्नी जावीं ।

विधिमाता शायद कही पास ही सुन रही थी, उसने उन का कहा मान लिया। पन्द्रह-सोलह दिन बाद पूरो की माँ के लड़का हो गया। शाहो के दूर-पार के संबंधियों को भी बधाइयां मिलने लगी। चिन्ता-जनक केवल एक बात थी, और वह यह कि लड़का तेलड़ था। तीन बहिनों पर भाई हुआ था। पूरो की माँ को बड़ी चिन्ता थी, राम करे किसी प्रकार लड़का बच जाय, और बच जाय तो माता-पिता को भारी न हो। विधिमाता को मनाने वाली स्त्रियाँ फिर एक बार इकटठी हुईं और काँसी के एक बड़े-से थाल के बीच में बड़ा-सा छेद करके लड़के को उसमें मे आर-पार निकाला, साथ में गाती रहीं—

त्रिखलां दी धाड़ आयी,
त्रिखलां दी धाड़ आयी ।

तीन लड़कियों के दल के बाद ईश्वर की कृपा से उत्पन्न हुए लड़के के सारे शगुन मना कर अब सब को विश्वास हो गया कि लड़का बच जायगा ।

पन्द्रहवाँ वर्ष आरंभ होते-होते पूरो के अंग प्रत्यंग में एक हुलार सा आ गया । पिछले बरस की सारी कमीजें उसके शरीर पर तंग हो गयीं । पूरो ने पास की मंडी से फूलों वाली छींट लाकर नये कुरते सिलवाये । कितना-सारा अबरक लगाकर चुनरियाँ तैयार कीं ।

पूरो की सहेलियो ने उसे दूर से उसका मंगेतर रामचन्द दिखा दिया था । पूरो की आँखों में उसकी छवि पूरी-की-पूरी उतर गयी थी। उसका ध्यान आते ही पूरो का मुंह लाल हो जाता था ।

पूरो निःशंक होकर बहुत कम ही बाहर निकल सकती थी, क्योंकि पास के गाँव वालों का इस गाँव में आना जाना बहुत रहता था । उस की समुराल के गाँव वाले कहीं पूरो को देख न ले, इस बात से पूरो बहुत डरती थी । और फिर अब यह गाँव बहुत करके मुसलमानों का हो गया था ।

वैसे जरा ढिल ढले पूरो और उसकी सहेलियाँ खेतों में घूम फिर आती थीं । कई बार पूरो अपने खेतों के पास से गुजरती हुई कच्ची सड़क के आस-पास अटक रहती, कभी कोई साग चुनने बैठ जाती, कभी किसी बेरी के पेड़ से लगकर खड़ी हो जाती, बेर गिराती, उन्हें चुनती और सहेलियों को बातों में लगाये रखती । वह सड़क उसकी होनेवाली सुसराल को जाती थी ।

मन ही मन वह सोचती, यदि उसका मँगेतर आज इधर से गुजर जाय ! वह उसे गुजरते हुए एक बार देख ले ! पूरो का दिल उस

माता की पूजा की। गाव की कुछ स्त्रियों ने पूरो के घर के आँगन में गोबर की एक गुड़िया बनायी, लाल चुनरी के किनारी लगाकर उसे उस गुड़िया के सिर पर उढा दिया, दो माशे सोने की छोटी-सी नथ बनवा कर उसकी नाक में डाली, और सब ने मिलकर गाया—

बिधमाता रुस्सी आवीं ते मन्नी जावीं,
बिधमाता रुस्सी आवीं ते मन्नी जावीं ।

उनके अपने गाँव मे और आस-पास के गाँवों में स्त्रियों का यह विश्वास था कि प्रत्येक बालक के जन्म के समय विधिमाता स्वयं आती है। यदि विधिमाता अपने पति से हंसती खेलती आती है तो आकर झटपट लड़की बनाकर चली जाती है क्योंकि उसे अपने पति के पास लौटने की जल्दी होती है। किन्तु यदि विधिमाता अपने पति से रूठ कर आती है तो उसे लौटने की कोई विशेष जल्दी नो होती नही, वह आ कर बहुत समय तक बैठती है और आराम से लड़का बनाती है। सो सब स्त्रियों ने मिलकर फिर गाना आरंभ किया—

बिधमाता रुस्सी आवीं ते मन्नी जावीं,
बिधमाता रुस्सी आवीं ते मन्नी जावीं ।

विधिमाता शायद कहीं पास ही सुन रही थी, उसने उन का कहा मान लिया। पन्द्रह-सोलह दिन बाद पूरो की माँ के लड़का हो गया। शाहो के दूर-पार के संबधियों को भी बधाइयां मिलने लगी। चिन्ता-जनक केवल एक बात थी, और वह यह कि लड़का तेलड़ था। तीन बहिनों पर भाई हुआ था। पूरो की माँ को बड़ी चिन्ता थी, राम करे किसी प्रकार लड़का बच जाय, और बच जाय तो माता-पिता को भारी न हो। विधिमाता को मनाने वाली स्त्रियाँ फिर एक बार इकट्ठी हुईं और काँसी के एक बड़े-से थाल के बीच में बड़ा-सा छेद करके लड़के को उसमें से आर-पार निकाला, साथ में गाती रहीं—

त्रिखलां दी धाड़ आयी,
त्रिखलां दी धाड़ आयी ।

तीन लड़कियों के दल के बाद ईश्वर की कृपा से उत्पन्न हुए लड़के के सारे शगुन मना कर अब सब को विश्वास हो गया कि लड़का बच जायगा ।

पन्द्रहवाँ वर्ष आरंभ होते-होते पूरो के अंग प्रत्यंग में एक हुलार सा आ गया । पिछले बरस की सारी कमीजें उसके शरीर पर तंग हो गयीं । पूरो ने पास की मंडी से फूलों वाली छींट लाकर नये कुरते सिलवाये । कितना-सारा अबरक लगाकर चुनरियाँ तैयार कीं ।

पूरो की सहेलियो ने उसे दूर से उसका मंगेतर रामचन्द दिखा दिया था । पूरो की आँखों मे उसकी छवि पूरी-की-पूरी उतर गयी थी। उसका ध्यान आते ही पूरो का मुंह लाल हो जाता था ।

पूरो निःशंक होकर बहुत कम ही बाहर निकल सकती थी, क्योंकि पास के गाँव वालों का इस गाँव में आना जाना बहुत रहता था । उस की समुराल के गाँव वाले कहीं पूरो को देख न ले, इस बात से पूरो बहुत डरती थी । और फिर अब यह गाँव बहुत करके मुसलमानों का हो गया था ।

वैसे जरा ढिल ढले पूरो और उसकी सहेलियाँ खेतों में घूम फिर आती थीं । कई बार पूरो अपने खेतों के पास से गुजरती हुई कच्ची सड़क के आस-पास अटक रहती, कभी कोई साग चुनने बैठ जाती, कभी किसी बेरी के पेड़ से लगकर खड़ी हो जाती, बेर गिराती, उन्हें चुनती और सहेलियों को बातों में लगाये रखती । वह सड़क उसकी होनेवाली सुसराल को जाती थी ।

मन ही मन वह सोचती, यदि उसका मँगेतर आज इधर से गुजर जाय ! वह उसे गुजरते हुए एक बार देख ले ! पूरो का दिल उस

सड़क के किनारे खड़े होते ही धक-धक करने लगता। फिर सारी रात पूरो अपने युवा मँगेतर के स्वप्नों मे मग्न रहती।

एक दिन पूरो की नयी जूती उसकी एडी में बहुत लग रही थी। सहेलियों के साथ चलते वह पीछे रह-रह जाती थी। पूरो और उसकी सहेलियाँ खेतों में से होकर घर लौट रही थी। साँझ का अंधकार पिघले हुए सिक्के की भाँति चारों ओर बिखर गया था। लड़कियाँ खेतों की डौल-डौल चलती अब गाँव की पगडडी पर आ गयी थीं। यह पगडंडी कहीं चौड़ी और खुली हुई खाली भूमि पर होकर जाती थी और कहीं कुछ पेड़ों, पीपलो और झाड़ियों के साथ-साथ मानो उनकी बाँह पकड़-पकड़कर आगे बढ़ती थी। सब लड़कियाँ आगे पीछे इसी पगडंडी पर चली जा रही थी। पूरो जरा पीछे रह गयी थी। दाये पाँव की एड़ी के पास एक बडा-सा छाला उभर आया था। पूरो ने तंग जूती दोनों पैरों से उतारकर हाथों में ले लीं और पाँव तेजी से बढाने लगी।

लड़कियाँ पूरो से कहा करती थी कि उसका दायाँ पैर बाँये से भारी था, इस लिए उसके दाहिने पैर में जूती लगती थी। इसी तरह पूरो का दायाँ हाथ भी बायें हाथ से भारी था। 'हाँ जी, चूड़ी पहनते हुए पता चलेगा" कहकर लड़कियाँ पूरो को छेड़ा करती थी। पूरो की आँखों के सामने आगया, मानो सच्चे हाथी दाँत की लाल चूड़ियाँ उसके हाथों में पहनायी जा रही हैं, पिछली बड़ी बड़ी खुली चूड़ियां पहनाने के बाद आगे की छोटी चड़ियाँ उसके दायें हाथ में फँस गयी हैं। नाई ने तेल से उसके अगूठे की हड्डी को मला और हाथी दाँत की लाल चूड़ी को उसके हाथ में जोर से धकेलने लगा। पूरो को खयाल आया, कही उसकी हाथी दाँत की लाल चूड़ी उसके दाँहिने हाथ में टूट जाय तो! पूरो के कलेज को एक धक्का सा लगा। हाय! यह शगुन कितना बुरा

है। उसकी शगुन की चूड़ी, उसके सुहाग की चूड़ी उसके हाथों में क्यों टूटे। पूरो ने अपने दाहिने हाथ को तिरस्कर से देखा। भागवान! उसका मंगेतर युग-युग जिये! हजार लाख वर्ष जिये! पूरो के हृदय ने कामना की। फिर पूरो को याद आया, उनके गाँव में चूड़ा चढ़ाते समय एक लड़की की चूड़ी सचमुच टूट गयी थी। पास खड़ी हुई स्त्रियाँ "राम, राम" कह कर भगवान से उसके पति की कुशल याचना करने लगी थीं। फिर सुनार से सोने का एक पतला-सा तार उस टूटी हुई चूड़ी में पुरवा कर उस लड़की को फिर वही चूड़ी पहनायी थी मानो उन्होंने उसके पति की टूटी हुई जीवन-डोरी को जोड़ लिया हो।

पूरो इन्ही शगुन-अपशगुन के विचारों में फँसी हुई थी कि बायें हाथ की ओर के पीपल के पीछे से एक व्यक्ति निकल कर पूरो के सामने खडा हो गया। पूरो के कलेजे पर मानो हथौड़ा-सा पड़ा। पूरो ने जल्दी से देखा, उसके गाँव का जवान लड़का रशीद उसके सामने खड़ा था। रशीद की आयु बाईस-चौबीस वर्ष की होगी। उसकी भरी हुई जवानी उसके मुँह पर प्रत्यक्ष बोल रही थी।

पूरो ने देखा रशीद की दोनों बड़ी-बड़ी आँखें पूरो के मुँह पर गड़ी हुई हैं। वह काँप उठी। उसके मुँह से एक हल्की-सी चीख निकली और वह रशीद के पास से बचती हुई भाग खड़ी हुई।

पूरो भागती-भागती लड़कियों के साथ जा मिली। अब वह अपने घरों के पास पहुँच गई थी। पूरो का साँस ठिकाने न था। इतना ही भला हुआ कि रशीद ने उसके हाथ न लगाया, रशीद ने उससे मुँह से कुछ न कहा।

"अरी, लड़का था या कोई शेर था" सहेलियों ने उससे ठठोली की, किन्तु अभी तक पूरो की जान में जान नहीं आयी थी।

"शेर तो सिर्फ फाड़कर खा जाता है, कहते हैं कि अगर रीछ

को कोई औरत अकेली मिल जाय तो वह उसे मारता नहीं, उठाकर ले जाता है। अपनी गुफा में ले जाकर उसको अपनी स्त्री बना लेता है।" सहेलियों से एक ने यह बात सुनायी।

पूरो की जान फिर सूखने लगी। हाय उस करमों जली का क्या हाल होगा जिसे रीछ अपनी स्त्री बना ले। यह सोच--सोचकर पूरो का रंग उड़ने लगा। पूरो को फिर रशीद की फैली-फैली आँखे याद आ गयीं।

अब पूरो अपने घर पहुँच गयी थी। सहेलियाँ हँसती-बोलती आगे बढ़ गयीं

दूसरे दिन जब पूरो और उसकी सहेलियाँ खेतों मे सीगरे तोड़ रही थीं, जल्दी से पूरो दो मुट्ठी सीगरे पास ही चलते हुए रहट पर धोने ले गयी। छोटे-छोटे सीगरों की डडियाँ तोड़कर दो चार सीगरे पूरो ने अपने मुँह में डाल लिये। तभी उसने देखा कि पास पेड़ के साथ रशीद खड़ा हुआ है। उसकी टाँगों में से मानो किसी ने जान ही खीच ली। भय उसके मुँह पर छा गया।

"अजी डरती क्यों हो ? हम तो तुम्हारे चाकर है" आज रशीद बोल उठा। उसके मुँह से शरारत टपक रही थी।

पूरो को ऐसे लगा जैसे अभी रशीद रीछ के चौड़े पंजे की भाँति उसके मुख पर झपट पड़ेगा, उसकी लम्बी-लम्बी उंगलियाँ रीछ के नाखूनों की भाँति उसकी गर्दन के चारों ओर फैल जायेंगी। फिर वह उसे खींचता हुआ ले जायेगा और फिर.....फिर.....?

सौभाग्यवश पूरो ने देखा सामने से दो किसान चले आ रहे है। रशीद वैसे का वैसा ही खड़ा था। पूरो लाल टमाटरों से भरी हुई क्यारी के ऊपर से छलाँग मार कर जल्दी-जल्दी पाँव फेंकती सहेलियों से जा मिली।

उस दिन पूरो बहुत निढाल सी रही। सारे रास्ते लडकियों का हाथ पकड़-पकड़ कर चलती रही। परछाइयो से भी काँप-काँप उठती, ज़रा-ज़रा सी-खड़ खडाहट से भी चौक-चौक उठती।

पूरो ने न तो कुछ अपनी माँ को बताया, न अपने पिता को। उसकी सहेलियाँ कहती थी, भला यह भी माँ-बाप से कहने की कोई बात है। जवान लडकियों को रास्ता चलते शोहदे सदा से ही ताकते झाँकते आये है। मुँह ज़बानी कभी उनके गुलाम बनते है कभी अपने आपको उनका चाकर कहते हैं, ऐसे ही ऊल जलूल बकते ही आये है। वह बका करे, भौका करें, भला कोई कुत्तो के भौकने से डर कर सडकों पर चलना छोड देता है ?

उस दिन उनके गाँव में एक छः सात बरस के लड़के को एक पागल कुत्ते ने काट खाया। गली मोहल्ले की स्त्रियों ने मिलकर लड़के के घाव पर लाल मिरचें बाँध दी। मिरचों की तेज़ी से कुत्ते के दाँतों का ज़हर कट जाता है। पूरो ने जब यह खबर सुनी तो तुरन्त ही उसके मन में विचार आया कि वह लाल मिरचे कूट कर रशीद की आँखों में झोंक दे। जितना वह रशीद का आँखों के सबंध में सोचती थी उतना ही उसे ज़हर चढ़ता था।

सहेलियाँ पूरो की बाँहे पकड़ कर खीचती थी, पर पूरो को साहस न होता था कि वह खेतों की ओर जाये।

और फिर अब पूरो का विवाह भी दिन-दिन पास आ रहा था। पूरो के पिता ने घी और मैदा इकट्ठा करके घर में धर लिया था। पूरो की माँ ने पीले रेशम से कढ़ी हुई लाल फुलकारियो से लकड़ी का सन्दूक भर लिया था। सियाम से लाये हुए रेशमी जोड़ों से उसने दहेज वाला सफेद ट्रक मुँह तक भर दिया था। चुनरियो की छोटी बाँकड़ी चुन-चुन कर उसके पोरवे

दुखने लगी थे। पिछली ओर का भीतर वाला कमरा जहाँ उसने पूरो के दहेज के लिए पीतल के पूरे इक्यावन बर्तन जोड़े थे झमाझम कर रहा था। उन दिनों देहातों में क्रोशिए के काम का बड़ा चलन था। पूरो ने क्रोशिए से बनाये हुए फूल जोड़-जोड़ कर पलंग की पूरी चादर बनायी थी। दसूती के तार गिन-गिन कर उसने फूल काढ़ने सीखे थे। अपने हाथ से अपने दहेज के लिए डलिया और मूढ़े बनाये थे।

एक दिन पालक के नरम-नरम पत्तों को तोड़ कर पूरो ने साग काटा। पूरो की माँ सुतलो को बुनी हुई पीढी पर बैठी अपने लड़के को दूध पिला रही थी। पूरे ने मिट्टी को हंडिया को बान के छोटे-से गुच्छे से अच्छी तरह माँजा, फिर साग को पानी से दो-बार धो कर और उसमें चने की दाल मिला कर हंडिया को मुँह तक भर दिया। हारे की मीठी-मीठी आग पर दूध पड़ा कढ़ रहा था। पूरो ने चूल्हे म दो चार छिपटियाँ लगा कर साग चढ़ा दिया।

पूरो का विवाह अब बस बिलकुल पास आ गया था। पूरो की मां को प्रतीक्षा थी कि कौन जाने आज या कल पूरो की ससुराल से कोई नाप लेने ही आ जावे। पूरो कितनी सुन्दर सुघड़ लड़की है। रोटी टुकड़ा तो वह आँगन में इधर से उधर चलते फिरते ही कर लेती है। पूरो की सहेलियाँ कहती थी कि पूरो को जवानी भी तो भरपूर चढ़ी है। पूरो के गोरे निर्मल मुख पर आँख ठहरती न थी। पूरो की मां ने एक चाहत भरी दृष्टि से पूरो की ओर देखा, शायद वह सोचती थी कि पूरो अब ससुराल चली जायेगी। पूरो के मायके का घर भाँयभाँय करेगा। पूरो अपनी मां का दाहिना हाथ थी। मां की आँखों में आँसू भर आये। हर बेटी की मां को रोना पड़ता है। बैठी-बैठी पूरो की मां गाने लगी—

लावीं ते लावीं नी कलेजे दे नाल माए,
दस्सीं ते दस्सीं इक बात नीं।
बातां ते लम्मीयां नी धीयां क्यों जम्मियां नी,
अज्ज विछोड़े वाली रात नीं।

पूरो को मां का कलेजा भर आया। पूरो चौके के छोटे-छोटे काम निबटाती हुई अपनी मां की आवाज सुन रही थी। पूरो के दिल में बिछोड़े की एक हौल-सी उठी। पूरो की माँ आगे गाने लगी।

चरखा जु डाहनीयाँ मैं छोपे जु पानीयाँ मैं,
पिड़ियाँ ते वाले मेरे खेस नीं।
पुत्राँ नू दित्ते उच्चे महल ते माड़ियाँ,
धीयाँ नू दित्ता परदेस नीं।

पूरो दौडी-दौडी आ कर माँ के गले से लिपट गयी। माँ बेटी दोनों रो पड़ीं। हर लड़को का यौवन उसे अपनी माँ से अलग कर देता है।

पूरो की माँ ने जीकड़ा किया। बेटी के कधे पर प्यार किया। संध्या समय का अन्धकार उनके आँगन में भी उतर आया था। पूरो की माँ को याद आया कि दूसरी चीज चढ़ाने को इस समय घर मे कुछ भी नहीं था, कौन जाने पूरो को ससुराल से कोई आदमी आता ही हो।

पूरो से उसने कहा कि छोटी बहिन की उंगली पकड़ कर पास के खेतों मे से चार भिंडियाँ ही तोड ला। और चावलों की एक मुट्ठी और गुड़ की भेली डालकर मीठे चावल भी चढ़ा दे।

पूरो का दिल भी आज भर-भर आता था। उसने अपनी छोटी बहिन को साथ लिया और बाहर चली गयी।

पूरो ने भिंडियाँ तोड़ीं, दो-चार सींगरे तोड़े और उलटे पाँव छोटी बहिन को साथ ले कर घर की ओर चली। लौटते समय पूरो को केवल यह विचार आ रहा था कि अब वह अपनी माँ से अलग हो जायेगी,

अपनी बहिनो से बिछुड़ जायेगी, अपने नन्हे से भाई से दूर चली जायेगी। वज्र के प्रहार के समान पूरो को एकाएक खयाल आया यदि यहाँ रशीद मिल जाय तो !

और वह पाँव उठाकर चलने लगी। "पूरो, दौड़ क्यों रही है ?" पूरो की छोटी बहिन का साँस चढ गया था।

पूरो के पीछे की ओर से एक घोड़ी दौडती हुई आयी। पूरो अभी पगडंडी से हट भी न पायी थी कि न जाने घोड़ी या घुड़सवार कौन पूरो के दाहिने कन्धे से टकरा गया। पूरो गिरने ही लगी थी कि किसी ने उसे कन्धे से पकड़ कर घोड़ी के ऊपर डाल लिया। पूरो की चीखें उड़ती हुई घोड़ी के साथ पल-पल दूर होती चली गयी। उसकी बहिन खडी काँपती रह गयी।

न जाने वह घोड़ी कहाँ से आयी थी, उसका सवार कौन था, घोड़ी कितनी देर तक दौड़ती रही, पूरो अचेत थी।

पूरो को जब होश आया, वह एक कमरे में चारपाई पर पड़ी थी। चारों ओर दीवारें थी, सामने एक बन्द दरवाजा।

पूरो को सब कुछ याद आ गया। उसने दीवारों से अपना सिर दे दे मारा, उसने दरवाजे से अपना सिर दे दे मारा।

हार थक के पूरो चारपाई पर पर आ पड़ी। वह फिर अचेत हो गयी।

पूरो को जब होश आया, कोई उसके सिर मे गरम घी मल रहा था। पूरो ने एक बार सोचा, शायद उसकी माँ उसके सिरहाने बैठी हुई थी और पूरो को बहुत तेज बुखार चढ़ा था।

"ओ, माँ !" पूरो के मुख से निकला।

"मेरी गलती माफ़ कर और एक बार होश में आ, पूरो !" किसी ने सिरहाने की ओर से कहा।

ज्वर से जलती हुई पूरो ने सिर उठाकर देखा, रशीद उसके सिरहाने बैठा था। पूरो की एक चीख निकली और वह मूर्छित हो गयी।

पूरो ने देखा, काली खाल वाला एक रीछ उस के बालों मे अपने पंजे फेर रहा है, पूरो एक गुफा म पडी है, वह सिकुडती जाती है, रीछ फैलता जाता है, रीछ ने अपनी बालों वाली बाँहों में पूरो को लपेट लिया है।

परो ने आँखें फाड़-फाड़ कर देखा, कोई उसके पैरों के तलवे मल रहा था। फिर किसी ने उसके कन्धों को दबाया। फिर किसी ने उसके मुँह में चुल्लू भर-भर पानी डाला।

रीछ की गुफा या रशीद का घर ? पूरो के सिर में चक्कर आ रहे थे। फिर शायद पूरो सो गयी।

पूरो को अपनी माँ, अपना गाँव, सभी कुछ याद था। वैसे उसे लगता था कि इस गुफा में पड़े-पड़े उसे कई वर्ष हो गये है। रशीद की सूरत देखने की उसे आदत हो गयी थी। न रशीद ने उससे कभी कुछ कहा, न उसने कभी रशीद को बुलाया। सोती हुई पूरो के मुँह में रशीद गरम किया हुआ गुड़ और घी चमचे से डाल देता था। कभी कुछ पूरो के गले के नीचे उतर जाता था, कभी पूरो थूक डालती थी।

फिर पूरो ने साहस करके दीवार के साथ पीठ लगायी और चारपाई पर बैठ गयी।

"मै कहाँ हूँ ?" पूरो ने पूछा।

"मेरे पास" रशीद चारपाई के सामने एक स्टूल पर बैठा था। रशीद का मुख झुका हुआ था। आज उसकी आँखें फट-फट कर पूरो के मुख पर नहीं पड़ रही थीं।

"तू मुझे यहाँ क्यों लाया है ?" पूरो को पूछने का साहस हुआ।

"फिर कभी बताऊँगा।" रशीद ने इतना ही कहा और उठ कर बाहर चला गया। पूरो गुमसुम चारपाई पर पड रही।

इस समय कमरे का दरवाजा खुला हुआ था। पूरो ने देखा, बाहर एक छोटा-सा दालान है, दालान के साथ ही एक छोटी-सी ड्योढी है, और फिर बाहर का दरवाजा।

पूरो काँपते-काँपते उठी। उसने चारो ओर दीवारो को देखा। वह डर रही थी, अभी इन दीवारों में से कोई निकल आयेगा, उसकी बाँहें पकड़ कर उसे चारपाई पर डाल देगा। किन्तु दीवारों में से कोई न निकला। पूरो बाहर के दालान में आ गयी।

आँगन के एक कोने में चूल्हे में आग बुझी हुई थी। पास ही एक हाडी और तवा परात बिखरे पड़े थे। पानो का एक घड़ा भरा हुआ कोने मे पडा था। पर कोई आदमी कही नजर नहीं आता था।

पूरो काँपते पैरों से डयोढ़ी में आयी, बाहर के दरवाजे के पास आयी, फिर पीछे मुड़कर कोठड़ी की ओर देखा, फिर दरवाजे के पास को हो गयी।

पर मकान का दरवाजा पूरो के भाग्य की भांति बन्द पड़ा था। पूरे ने बन्द दरवाजे के साथ अपना सिर लगा दिया, पर दरवाजे को न पूरे के झुके हुए सिर पर तरस आया, न मुरझाये हुए चेहरे पर, न भीगी हुई आंखों पर।

पल्ले से मुँह पोंछ कर परो दरवाजे से लौट आयी। घडे में से पानी का एक चुल्लू भर कर पूरो ने अपनी आँखों पर डाला। फिर पूरो को विचार आया कि वह दरवाजा पीट कर देखे, शायद कोई अड़ोसी-पड़ोसी या रास्ता चलता उसकी आवाज सुन ले।

पूरो ने आँगन की कच्ची ऊँची दीवारों की ओर देखा, फिर एक बार साहस जुटाकर दरवाजे को पीटना आरंभ कर दिया। पूरो ने दरवाजे की दरजो के बीच से देखा, बाहर खुला मैदान ही मैदान था, कोई मकान कोठड़ी दिखाई नही देती। पूरो सोच-सोच कर थक गयी, न जाने वह किस जगल में थी।

पूरो दरवाजे के पास ही खड़ी हुई थी कि बाहर से दरवाजा खुला। रशीद ने भीतर आकर दरवाजा बन्द कर लिया और ताला लगा दिया। पूरो वहीं की वहीं बैठ गयी।

"पूरो! क्यों व्यर्थ में हवा से टक्करें मारती है, भातर चल, कुछ अपने मुँह मे डाल, तूने दो दिन से कुछ नही खाया है" रशीद ने खड़े-खड़े कहा। वैसे न उसने पूरो का हाथ पकड़कर उसे उठाया, न उसकी ओर आंखे फाड़ फाड़ कर देखा।

"मुझ पर दया कर, रशीद! मुझे घर छोड़ आ।" पूरो उसके पैरों पर गिर पड़ी।

इस बार रशीद ने पूरो को अपनी लाठी जैसी जवान बाँहों में उठा लिया और गठड़ी बनी हुई पूरो को कस कर अपनी छाती से लगा लिया।

"मेरे दिल की आग कौन बुझायेगा?" रशीद ने हाथ पाँव मारती हुई पूरो को अपनी बाँहों में कसे रक्खा।

वह दिन भी बीत गया, वह रात भी बीत गयी। रशीद ने उससे फिर कुछ नहीं कहा। दरवाजा वैसे का वैसा बन्द था, रशीद वैसे का वैसा ही पहरे पर था।

रशीद उस घर से बाहर भी जाता। घंटे दो घंटे बाहर भी लगा आता। पूरो कैद रहती फिर तारों की छाँह में पूरो का हाथ पकड़ कर रशीद उसे घर से बाहर ले जाने लगा। पूरो ने देखा, उस घर के सिवा

उस लम्बे-चौड़े मैदान में और कोई घर नहीं था। रशीद के इस मकान के पास एक बहुत दूर तक फैला हुआ बाग था। शायद यह घर बाग के मालियों का घर हो। बाग में माली अवश्य होंगे, पर पूरो ने उन्हें कभी देखा न था, न उनकी आवाज ही सुनी थी। न तो पूरो के दिन ही बीतते थे, न उसकी रातें ही काटे कटती थीं। पूरो को केवल यही सन्तोष था कि रशीदने उससे कोई बुरी भली बात नहीं कही थी। पूरोकी मर्यादा अभी तक बची हुई थी। यह और बात थी कि रशीद पर न पूरो की प्रार्थनाओं का असर होना था, न पूरो की गालियों का।

पूरो के अपने अनुमान के अनुसार उसे कैद हुए पूरे पन्द्रह दिन हो गये थे।

एक दिन रशीद ने लाल रेशम का एक जोड़ा पूरो के सामने लाकर रक्खा। इससे पहले भी रशीद ने पूरो को बदलने के लिए दो जोड़े सूती कपड़ों के लाकर दिये थे। पर इस बार रशीद ने लाल रेशम का जोड़ा पूरो के आगे रखते हुए कहा "कल सवेरे नहा धो कर तैयार हो जाना, मौलवी आकर हमारा निकाह पढ़ा देगा।"

पूरो का दिल धक् से हो गया। जो अब तक नहीं हुआ है क्या अब होकर ही रहेगा!

उस दिन पूरो फिर रशीद के पैरों पर गिर पड़ी।

"पूरो! होना हवाना कुछ नहीं। व्यर्थ मेरे सिर पर गुनाहों का बोझ न लाद! कसम है अल्लाह पाक की, मुझसे तेरा यह रोना नहीं देखा जाता" रशीद ने मुँह परे करके कहा।

पूरो की समझ में न आता था कि रशीद यदि ऐसा दयावान ही था तो उसने उसके सिर पर विपत्ति का यह पहाड़ क्यों डाल दिया।

"तुझे अपने अल्लाह की कसम है, रशीद। सच-सच बता तूने मेरे साथ ऐसी क्यों की है?"

"पूरो ! तेरा मेरा सम्बन्ध कोई पिछला लेना देना ही है। अब तुझे इन बातों से क्या मिलेगा। जो हो गया सो हो गया। मैं तुझे सारी उम्र तकलीफ न होने दूँगा।"

पूरो हैरान थी, परेशान थी, यह कैसा आदमी है। "पूरो ! हमारे शैखों के घराने में और तुम्हारे शाहों के घराने में दादा परदादा के समय से एक बैर चला आ रहा है। तेरे दादा ने पाँच सौ रुपये में गिरवी रखे हुए हमारे मकान पर ब्याज दर ब्याज लगाया था और कुर्की करा कर शैखों के घराने को घर से बेघर किया था। सिर्फ इतना ही नहीं उसके मुंशियों कारिन्दों ने हमारे घर की औरतों को बोल कुबोल कहे और मेरे दादा की बड़ी लड़की को जबरदस्ती तेरे दादा के बड़े लड़के ने तीन रात घर में रक्खा। तेरे दादा के देखते-देखते यह सब हुआ। पर उस समय शैखों का घराना पेरे हुए गन्ने की भाँति था। सब खून के आँसू पीकर रह गये। पर मेरे दादा ने मेरे चाचा ताऊओं को और मेरे पिता को कुरान उठवा कर कसमें दिलवायीं थीं कि वे इसका बदला लेकर ही रहेंगे। उसकी अगली पीढ़ी के समय बात सो गयी। अब जब तेरा काज इसी गाँव में रचा जाने लगा, मेरे चाचा ताऊओं के लहू में पुराना बदला खौलने लगा। उन्होंने मुझे कसमें दिलायीं, मेरे लहू को ललकारा और मुझसे कौल कराये कि मैं शाहों की लड़की को ब्याह से पहले किसी भी दिन उठा ले जाऊँ।" रशीद चुप हो गया।

पूरो धैर्यपूर्वक अपनी किस्मत की कहानी सुनती रही।

"पूरो ! पहले ही दिन जब मैंने तुझे देखा, खुदा गवाह है, मुझे तुझ से इश्क हो गया। एक तो मेरी मुहब्बत का जोर, दूसरे मेरी पीठ पर सारा शैख घराना। मैं तुझे ले आया हूँ, पर मुझसे कसम ले ले, मुझ से तेरा दुख नहीं देखा जाता" रशीद ने कहा।

पूरो ने दोनो हाथो में अपना सिर थाम लिया।

"तेरी बूआ को मेरे ताऊ ने उठा लिया, पर रशीद ! इसमें मेरा क्या दोष ? हाय ! मैं कहीं की न रही !" पूरो का मुँह आंसुओं से भीग गया।

"यही तो मैं कहता था, पर मेरे चाचा मुझ पर फिटकार करते थे।"

"तो रशीद ! उनके उकसाने के कारण तूने मुझे मार डाला ?" पूरो ने रोते-रोते कहा।

"पूरो ! मैं सारी उम्र तेरे आगे जग की नेमतें ला-ला कर रक्खूंगा" रशीद ने भरे हुए गले से कहा, "मैं तेरे ताऊ की तरह नही करूँगा कि तीन रातों के बाद बेचारी औरत की धक्का दे दूँ।"

"रशीद ! एक बार मुझे मेरी माँ से मिला दे।" पूरो को कहने के लिए यही मिला।

"ओ नेक बख्त ! अब उस घर में तेरे लिए कोई जगह नहीं। उनकी बिरादरी का कौन हिन्दू फिर शाहों के घर का पानी पियेगा। तू मेरे घर में पूरे पन्द्रह दिन रह चुकी है।"

"पर मैंने तो सिर्फ तेरे घर का अन्न पानी मुँह से लगाया है, मैं···" पूरो आगे कुछ न कह सकी, पर जो कुछ पूरो कहना चाहती थी उसे रशीद समझ गया।

"इस बात को कौन मानेगा, पूरो ! यह तो मेरी शराफत है कि पहले मैं तेरे साथ निकाह पढ़वाऊँगा···" रशीद ने नरम आँखों से पूरो की ओर देखा।

पूरो की आंखों के सामने उसका मंगेतर फिर गया। अभी पूरो के तेल चढ़ना था, पूरो ने "माइयें पड़ना" था, पूरो के हल्दी का उबटन मला जाना था, पूरो को सच्चे हाथीदांत का लाल चूड़ा चढ़ना था, पूरो

को कौड़ियों वाले कलीरे छनकाने थे, पूरो को रेशमी जोड़े पहनने थे, पूरो के रूप चढना था, पूरो को डोली में बैठना था, पूरो ·····पू·ो··· ···पूरो ·····

पूरो निर्दोष थी। वह कैसे समझ लेती कि उसकी माँ का दिल पत्थर हो जायेगा, उसके पिता का दिल लोहे का बन जायेगा, वे अपनी बेटी को घर से निकाल देगें, उनके घर की दीवारें उसे अन्दर रखने से इन्कार कर देंगी।

"मैं जब लौट कर घर नही पहुँची तो उस समय मेरे माता पिता का क्या हाल हुआ होगा। मेरी बहिन···।" पूरो को वह समय याद आ गया जब होनी उसके सिर पर टूट पडी थी।

"वह रोते कलपते रहे है, उसी तरह जैसे मेरा दादा, मेरा पिता, मेरे चाचा मेरी दुआ के चले जाने पर रोये थे। पुलिस भी बहुत खोज खबर लगा कर हार गयी है, पर उन्हें भी कोई अता पता नही लग सका है। और उन्हें पता लग भी कैसे सकता है। पुलिस ने पूरा पाँच सौ रुपया खाया है।" रशीद अपनी हंसी न रोक सका। "तू तो जानती ही है कि इस समय हमारा पलडा भारी है। सारा गाँव मुसलमानों का है। कोई हिन्दू का बच्चा आँख उठा कर हमारी ओर देख नही सकता। यही गनीमत है कि उनकी जान माल सलामत है। उन्हें अपनी जान प्यारी है, वह कुछ बोल नहीं सकते। अगर वे हमारे घर की ओर उगली भी उठाते, तो हमारे आदमी उन्हें नहर भी पार करने न देते" रशीद ने कुछ हस कर कहा। शायद उसके दिल में पुराने बदले की आग धधक उठी थी।

पूरो को रशीद का मुख देखकर बड़ी घृणा हुई। उसका जन्म नष्ट हो गया, यह लोक गया, परलोक गया। शायद उसके माता पिता छत्तो-आनी को अपनी पुत्री की बलि चढ़ाकर वापस सियाम लौट भी गये हों।

"क्या मेरे माता-पिता सियाम चले गये है ? पूरो ने तड़प कर पूछा।

"नही, अभी नहीं।" रशीद ने उत्तर दिया।

"मैं कहाँ रह रही हूँ ? अपने गाँव से कितनी दूर ?" पूरो ने उसी प्रकार पूछा।

"तू अपने गाँव के पिछली ओर माघोकियाँ के कुएं के पार मेरे अपने बाग में है। पर शायद तू अपने गाँव जाने का सपना देख रही है। अभी नही। जरा बात ठण्डी हो ले, छः महीने बीत जायें वहाँ भी ले चलूंगा" रशीद मुस्कराने लगा।

पूरो चुप हो गयी। रशीद ने चावल के पुलाव की एक तश्तरी भर कर पूरो के आगे रखी। रशीद जब बाहर जाता था तब शायद किसी के हाथ अपने गाँव से पकवान मंगवा लेता था। पूरो को कुछ पता न था।

उस दिन पूरो के मन मे कुछ उधेड़बुन लगी रही। उसे डर था कहीं उसका साहस उसे जवाब न दे जाय इसलिए पूरो ने चावल के दो चार कौर अपने मुंह म डाल लिये। पानी भी घूंट-घूंट करके एक कटोरा पी लिया।

उस रात पूरो ने सारा साहस इकट्ठा करके अपने मन को पक्का किया। रशीद के सिरहाने दरवाजे की चाभी रखी हुई थी। पूरो ने चुपके से उसे उठा लिया, दरवाजा खोला, उस का दिल धकधक कर रहा था कि रशीद अब जागा, अब जागा पर दुर्भाग्य से या सौभाग्य से कहिये रशीद की आँख न खुली।

बाहर रात के सन्नाटे को देखकर पूरो काँप उठी। एक बार उसका जी किया कि वह लौट कर रशीद के पास चली जाये। न जाने रात के अंधेरे में वह छत्तोआनी का रास्ता पा सकेगी या नहीं। कहीं रात के

अंधेरे में वह रशीद से भी गये बीते किसी आदमी के हाथ तो न पड़ जायेगी, न जाने उसकी क्या दशा होगी। पर पूरो को अपनी माँ का मुंह याद आ गया, पुरो को अपने पिता का मुख याद आ गया, बहिन भाई याद आ गये। पूरो ने वैसे ही एक पगडडी पर चलना आरंभ कर दिया, शायद यही माघोकियाँ के कुएं का रास्ता हो। डरती काँपती वह चलती रही।

रात का गहरा अधेरा फट चला था। माघोकियां के कुएँ का रास्ता ठीक निकला। पूरो ने झुटपुटे अंधेरे में ही छत्तोआनी गांव का पिछवाड़ा पहचान लिया।

अब पूरो न इधर मे थी न उधर में। उसने अपनी बची हुई शक्ति को अपने पांवों में डाला। वह दौड़ने लगी।

पूरो ने छत्तोआनी गाँव को पहचाना, अपने घर की ओर मुड़ती हुई गली को पहचाना, अंधेरे में अपने घर को दीवारों को पहचाना।

पूरो ने दरवाज़ा खटखटाया। जैसे ही किसी ने भीतर से दरवाज़ा खोला, पूरो डयोढ़ी में फ़र्श पर गिर पड़ी। वह अपनी शक्ति का अंतिम अश भी खर्च कर चुकी थी। अब वह दौड़-दौड़ कर, हाँफ हाँफ कर दाई को छ चुकी थी। अब मानो पूरो की सम्पूर्ण शक्ति निःशेष हो चुकी थी।

पूरो की आँखों में अँधेरा छा रहा था। उसने देखा, उसकी माँ, उसका पिता, हाथ में दिया ले कर उस के पास खड़े हुए हैं। वह एक घायल पक्षी की भाँति डयोढ़ी के कच्चे फ़र्श पर सिसकने लगी। उस ने देखा, माँ की आँखों से पानी की धारायें बह रही हैं। माँ ने पूरो को उठा कर अपनी बाहों में ले लिया। पूरो ने माँ की छाती से अपने सिर को ऐसे लगा लिया मानो उनके टूटे हुए संबंध फिर से जुड़ जायेगे। पूरो की माँ की चीखे निकल गयीं।

"लोग इकट्ठे हो जायेंगे" पूरो के पिता ने अपनी स्त्री का कंधा हिला कर कहा। पूरो की माँ ने अपने पल्ले के कोने को इकट्ठा करके अपने मुँह में ठूँस लिया।

"बेटा, तेरी किस्मत ! अब हमारे बस का कुछ नहीं" पूरो को अपने पिता का स्वर सुनायी दिया। वह अपनी माँ से चिपटी रही।

"अभी शेखों के यहाँ से लोग आ जायेंगे और हमारे बच्चे-बच्चे को पेर डालेंगे।"

"मुझे लेकर सियाम चले चलो" पूरो ने माँ की छाती से मुँह ज़रा हटा कर बड़े आग्रह के साथ कहा।

"हम तुझे कहाँ रखेंगे ? तुझे कौन ब्याह कर ले जायेगा ? तेरा धर्म गया, तेरा जन्म गया। हम जो इस समय कुछ भी बोले तो यहाँ हमारे लहू की एक बूँद भी नहीं बचेगी।"

"हाय, मुझे अपने हाथ से ही मार डालो" पूरो ने तड़प कर कहा।

'बेटा ! जन्मते ही मर गयी होती ! अब यहाँ से चली जा। शैख़ आते ही होंगे, तेरे पिता, तेरे भाई का कहीं पता भी नहीं मिलेगा, वे सब को मार डालेंगे।" माँ ने न जाने कैसे अपने दिल पर पत्थर रख कर यह बात कही।

पूरो को ध्यान आया रशीद ने कहा था "ओ नेकबख्त, अब उस घर में तेरे लिए कोई जगह नहीं" क्या रशीद ने सच ही कहा था ?

पूरो को एक बार मंगेतर रामचन्द का ध्यान आया। क्या सगाई, और क्या ब्याह ? क्या पूरो उसकी कुछ न लगती थी ? उसने पूरो की बात भी न पूछी ?

फिर पूरो का जीने को मन न किया। उसने सोचा, और सब रास्ते तो बन्द हैं, शायद मौत का रास्ता खुला हो। वह उठ कर बाहर की ओर चल दी।

न माँ ने रोका, न पिता ने। पूरो चलती गयी। आते समय पूरो जीवन से भेंट करने आ रही थी, उसके हृदय में लालसा थी, जीने की, माता पिता से मिलने की, बहुत डरती काँपती आयी थी। लौटते समय वह मृत्यु से भेंट करने चली थी। अब उसके मन में कोई डर नहीं था, कोई भय नहीं था। मृत्यु से बढ़कर कोई उसका क्या कर सकता था।

पूरो निःशंक माधोवियाँ के कूएँ की ओर जा रही थी। प्रभात का नवप्रकाश सब पगडण्डियों पर बिखरा हुआ था।

सामने से रशीद डग भरता चला आ रहा था। पूरो के पाँव वहीं जम गये। मृत्यु ने भी पूरो पर अपना दरवाजा बन्द कर लिया था।

पूरो को लगा कि इन पन्द्रह दिनों ने उसके शरीर पर से सारा माँस उतार लिया है, अब वह निरा पिंजर है, जिसकी न कोई आकृति है, न सूरत, न कोई मन, न मर्जी। रशीद ने आकर पूरो की बाँह पकड़ ली। वह उसके साथ चल दी।

तीसरे दिन एक मौलवी आया। दो तीन आदमी और आये। उन्होंने रशीद के साथ पूरो का निकाह पढ़वा दिया। फिर अपने आप ही रशीद ने पूरो को बताया कि उसके माता-पिता कुशलपूर्वक सियाम चले गये।

छत्तोआनी का नाम लेते हुए भी पूरो को चक्कर आने लगता। रशीद इस बात समझता था। और फिर पूरो को छत्तोआनी ले जाना भी ख़तरे से खाली नहीं था। शायद रशीद सोचता था कि कहीं वहाँ के या आस पास के गाँवों के हिन्दू भड़क न जायें, यद्यपि अब पूरा महीना होने वाला था और किसी का साहस न पड़ा था कि एक शब्द भी बोल सका हो। और फिर दूसरे की आग में कौन कूदता है ? यह तो पीढ़ियों के बैर थे, किसी ने अपने मन में दबा लिये किसी ने निकाल लिये।

रशीद की माँ या कोई बहिन उस समय जीवित न थी। भाई थे, चाचा थे। रशीद ने पूरो से कहा कि वह उसे वहाँ से कोसों दूर अपने एक गाँव सक्कडआली ले जाएगा जहाँ दादा पोतों के रिश्ते के एक भाई रहीम की जमीन थी। शायद उसकी कुछ जमीन को भी अपनी इधर की जमीन से बदल ले।

अब पूरो होनी के हर धक्के के लिये तैयार थी। जब सगे माता पिता ने ही धक्का दे दिया, तो अब गाँवों में ही क्या पड़ा था! यहाँ न सही, वहाँ सही।

रशीद स्वयं ही घर के बड़े की भाँति दो तीन ट्रक लाया, फिर कुछ और सामान लाया, और फिर पूरो को साथ लेकर सक्कड़आली चल दिया। रास्ते में जैसे कोई आँखे मीच कर चलता हो, ठीक उसी तरह रशीद के साथ-साथ चलकर पूरो नये गाव मे आ गयी। नये गाँव में पहुचते ही उन्हे एक अलग मकान मिल गया, शायद रशीद ने पहले ही रहीम से कह सुनकर यह व्यवस्था कर ली थी। रहीम का घर उनके घर से काफी दूर था। फिर भी रहीम के घर की स्त्रियाँ उस से मिलने आयी। यह पहली बार थी जब पूरो को रशीद के सम्बन्धियो में स्त्रियों से मिलने का अवसर पड़ा।

पूरो एक खोयी हुई बछिया की भाँति उनके पास बैठी रही। उन्होने पूरो से बहुत पूछ-ताछ न की। छोटी-मोटी घर की आवश्यकताओं के सम्बन्ध में ही पूछती रही।

रशीद पूरो को पूरो ही कह कर बुलाता। निकाह के समय पूरो का नाम हमीदा रखा गया था, वह अभी उसकी जबान पर नही चढ़ा था।

एक दिन अचानक ही रशीद एक आदमी को घर ले आया। वह बाहो पर स्त्रियो पुरुषों के नाम गोदता था। उस दिन फिर पूरो का हृदय

टीस उठी परन्तु जैसे ही रशीद ने कहा उसने बाँह आगे कर दी और उसकी बायी बाँह पर "हमीदा" गहरे हरे रंग के अक्षरों में गोदा गया। रशीद भी उस दिन से उसे हमीदा पुकारने लगा। शायद यह सलाह रहीम के घर वालों ने दी थी।

पूरो अब हमीदा बन गयी। किन्तु अभी तक जब रात को वह सोती थी, उसके सपनों में उसकी सहेलियाँ उससे मिलती थी, सपनों में वह अपने माता-पिता के घर खेलती कूदती फिरती थी, सब उसे पूरो ही पुकारते थे। दिन के प्रकाश में पूरो हमीदा बन जाती थी, रात के अंधकार में वह पूरो रहती। किन्तु पूरो सोचती थी, वह वास्तव में हमीदा थी न पूरो, वह केवल एक पिंजर थी, केवल पिंजर—जिसका कोई रूप न था, कोई नाम न था।

पाँच छः महीने बीते होंगे कि पूरो के पिंजर में एक नन्ही-सी जान फड़कने लगी।

बैसाखी का मेला

मटमैला दिन था। बीते हुए दिन एक-एक करके पूरो की आँखों के आगे से गुजर गये। बोरी के एक टुकड़े को अपने पैरों के नीचे ले कर पूरो पत्थर का बुत बनी हुई उन्हें देखती रही।

बाहर के दरवाजे को खोल कर रशीद भीतर के आँगन में आ कर खड़ा हो गया। पूरो को जैसे खड़का सुनायी ही नहीं दिया, पूरो को जैसे कोई आता दिखायी ही नहीं दिया, वह बैठी की बैठी रही। रशीद को शायद सचमुच ही पूरो से प्रेम था, वह चुपके से आकर पूरो के पास बैठ गया।

"क्या सोच रही है ?" रशीद ने अपनी एक बाँह पूरो के शरीर से सटा दी। पूरो आज अत्यन्त उदास थी, वह न हिल सकी, न बोल सकी।

रशीद उसे दुलार करता रहा। फिर बहुत देर बाद पूरो ने कहा

"आज मुझे ऐसा लगता है जैसे कोई मेरे भीतर मेरी अतड़ियों को नोच रहा हो।"

रशीद हँसता रहा और पूरो के मन को ढाढ़स बँधाता रहा। फिर रशीद ने चूल्हे में बुझी हुई आग को सुलगाया और पूरो को पास बिठाकर आप एक पतीले में बटेर भूनने लगा।

"न तू कहीं आती जाती है, न किसी से मिलती जुलती है। ऐसे तो अच्छे-भले आदमी का जी घबरा उठता है" रशीद ने कुछ देर ठहर कर कहा।

"कहाँ जाऊँ? मेरे लिए और जगह ही कौन-सी है?" पूरो ने बुझे हुए मन से कहा।

"अब तू घर की मालकिन है। और चार दिन में तेरे आँगन में एक जीव खेलने लगेगा। मेरे लिए न सही, उस के लिए ही सही, तुझे अपने मन को छोटा नहीं करना चाहिए। उस बिचारे ने तेरा क्या बिगाड़ा है?" रशीद को अपने होने वाले बच्चे का ध्यान आ गया, उसने उसी की दुहाई देकर पूरो से यह आग्रह किया।

पूरो को फिर मटर की फली में से निकले कीड़े का ध्यान आ गया जिसे देखकर जी मिचला उठे, जिसके पास वाले मटर के दानों को फेंक दिया जाये।

"ला, बटेरों के मसाले में थोडे से मटर डालने हैं" रशीद ने पूरो के आगे बिखरे हुए मटर के दानों की ओर देख कर कहा।

"मटर तो सब पकी हुई है। अब मटरों की कौन सी बहार है अब तो वैशाख चढ़ने वाला है" पूरो जानती थी आज वह मटर नहीं खा सकेगी।

"हाँ, सच! कल तो बैसाखी का बड़ा भारी मेला लगेगा" रशीद ने सहज स्वभाव से कहा।

"बैसाखी·····बैसाखी···" पूरो के कानों में गूजने लगा। वह परात में दो तीन मुट्ठी आटा डालकर गूंधने लगी जिस से उस का मन बट जाये।

"आज तो मेरा जी कर रहा है कि गुड़ डाल कर सेवइंयाँ बनायी जायें।" रशीद ने कहा। पूरो चुपके-से भीतर से सेवइंयाँ और गुड़ ले आयी।

उसी समय पूरो को एक बहुत पुरानी बात याद आ गयी। एक दिन पूरो की मां बैठ कर सूजी की सेवइंयां तोड़ रही थी कि पूरो ने कहा "मा, री माँ, मेरा तो मशीन की तोड़ी हुई सेवइंयां खाने को जी करता है।" इस पर मा ने तुरन्त कहा था, "हट, वह तो मुसलमान खाते हैं।"

यह बात याद आते ही पहले तो पूरो की आंखों मे आसू भर आये, फिर वह हंस पड़ी।

रशीद ने उसकी हसी का कारण पूछा, पूरो ने वह बात सुना दी। सुनाते सुनाते वह फिर रो पड़ी। रशीद लज्जित-सा बैठा हंसता रहा।

दूसरे दिन सवेरे जब पूरो सो कर उठी, गाव में बैसाखी के ढोल बज रहे थे। पहले तो पूरो घर के काम-काज में लगी रही, फिर वह छत पर चढ़ कर दूर गांव मे लगा हुआ बैसाखी का मेला देखने लगी।

दूर खड़ी पूरो को लोगों का एक विशाल समूह दीख पड़ रहा था। लम्बे-तड़गे जाट कमर में कोरे तहमद बांधे हुए, हाथों में तेल से चमकायी हुई लाठिया लिये, और हृदय में उत्साह और उल्लास भरे इधर से उधर आ जा रहे थे। बहुत से घोड़ियों पर चढ़े हुए थे, पीछे अपनी स्त्रियों को बिठाये आगे एक दो बाल-बच्चों को भी लिये और बहुत से थे जो बच्चों की उंगली पकडे, स्त्रियों को अपने पीछे लिए घूम रहे थे। कई बलिष्ठ नवयुवक अपने यौवन

और बल के मद में चूर छाती निकाले चल रहे थे, कुछ गाते जाते थे, कुछ बातें करते जाते थे। दूर परे मैदान में कुश्तियां हो रही होंगी, जलेबियों के थाल लगे हुए होंगे, गरम पकौडियों की महक दूर तक हवा में फैली हुई होगी। गुड़ के शक्करपारे, मैदे की मठड़ियाँ और मिठाइयों के ढेर के ढेर लोहे के चौड़े थालों में सजे हुए होंगे।

पूरो के मस्तिष्क में एक विचार उत्पन्न हुआ, मानो किसी ने उसके सिर में हथौड़ा दे मारा। उसकी मां ने तीन लड़कियों के बाद इस बार पुत्र को जन्म दिया था और वह·····यह उसकी पहली बैसाखी थी।

पूरो खडी थी, छत पर बैठ गयी। कौन जाने इस समय उसकी मां ने उसके छोटे भाई को पानी चखाया होगा। पास बहती हुई किसी नदी का पानी ले कर, गुलाब के फूल को उस पानी में भिगो कर, उसके भाई के नन्हे गुलाबी होठों से लगाया होगा। फिर उसकी मा को बधाइयाँ मिली होंगी। और कौन जाने···कौन जाने इस समय उसकी मां को अपनी पेट की जायी पूरो की याद आ गयी होगी·····

पूरो की आंखों में आंसू भी आ आ कर थक चुके थे। वह दोनों हाथों में सिर को पकड़े बैठी रही।

युवा जाट लड़कों की एक टोली कानों में फूल अड़ाये हंसती गाती परे से गुजर रही थी। उनमे से कोई बोली गा रहा था—

खूह ते बैठी दातन करदी
चिट्टेयां दंदां दी मारी
नीं आपे तैनूं लै जाणगे
जिन्हां नूँ लगें पियारी
नी आपे तैनुँ लै जाणगे·····

"काश! कोई प्यारी लगने वालियों के हाल तो देखे।" पूरो के

मुँह से धीरे से निकल गया।

फिर पूरो के मन में एक विचार आया, वह रशीद को ही प्यारी लगी, रशीद उसे ले आया। वह अपने मगेतर रामचन्द को क्यों प्यारी न लगी, उसने तो उसकी बात भी नही पूछी। वह तो रामचन्द को प्यारी लगना चाहती थी। रशीद को न तो उसने स्वयं ढूंढा था, न ही उसके माता-पिता ने उसे चुना था।

जाट हंसते जा रहे थे, कूदते जा रहे थे, भंगडा नाचते जा रहे थे, बोलियाँ गाते जा रहे थे :

तेरे लौंग दा वज्जा लिशकारा
हालियां नूँ हल भुल्ल गये···
तेरा भिज्जया परी दा लहंगा
पच्छौं दियां पैण कणियां ··
सानूँ कंड ना देईं मुटियारे
नी राहे राहे जाण वालीए···

पूरो सोचती रही, सब गीत सुन्दर लड़कियो के ही गुण गाते हैं, सारे भजन सच्चे प्रेम का ही वर्णन करते हैं, क्या कभी ऐसे गीत भी बनेगे जिन में मुझ जैसी लड़कियों के रुदन की कथा लिखी जायगी क्या कभी ऐसे भजन भी होगे जिनका कोई भगवान ही न होगा।

चढ़ती जवानी वाली कुछ नवयुवतिया अपने यौवन की उच्छृंखलता में अपनी एक अलग टोली बना कर मेले में चली जा रही थी। कुछ दूर पर जा रहे जाट लड़के अपनी टोलियों में से मुड मुड़ कर उन की ओर ताक झांक रहे थे, और हंस रहे थे, शायद उन से हसी मजाक कर रहे हो। पूरो सोचने लगी, यदि उन सब जवान लड़कियों को यह लड़के अपनी अपनी घोड़ियों पर उठा कर भाग जायें, फिर क्या हो? यदि य ६न लड़ाकया का उठा कर ले जाय·····

पूरो का बच्चा

भरी गर्मी आ गयी थी। छिपटियाँ डालकर जलाये गये तन्नूर की भाँति धरती जल रही थी।

पूरो कभी बैठती, कभी उठती, कभी लेट रहती थी। आज उसका जी ठीक नहीं था। पल पल पर वह पानी पी रही थी। उसकी पड़ोसिन ने उससे कहा था; "जैसे भी हो आज नहा ले और अपना सिर भी धो ले, फिर क्या पता रात को या सबेरे ही तेरे घर कुछ हो जाय, फिर तू कितने ही दिन उठने योग्य न रहेगी।

रशीद ने देखा, पूरो का रंग शरीर में उठती पीड़ा के साथ साथ पूनी जैसा सफेद होता जा रहा था। रशीद को वह समय याद आ गया जब वह छत्तोआनी की कच्ची सड़क से पूरो को अपने आगे घोड़ी पर बिठा कर भगा लाया था। उस समय भी पूरो का रंग सफेद फटकरी जैसा हो गया था। उस समय पूरो की आत्मा में से चीसें उठ रही थीं,

आज उसके रक्त मांस मे से।

रशीद ने रहीम के घर अपने खेतों पर काम करने वाला एक नौकर भेजा। पूरो को अकेली छोड़ कर जाने का उसे साहस न होता था। जब रहीम की माँ पहुँची, उस समय बढ़ती हुई पीडा पूरो के मुखपर बल खा रही थी। आते समय रहीम की माँ अपनी गली वाली उस रेशमाँ दाई को भी लेती आयी थी जिसने रहीम की दोनों स्त्रियों के दो दो तीन तीन लडके लडकियाँ पैदा होने के समय मदद दी थी।

दाई ने आते ही एक पुरानी दरी फर्श पर डाल कर उस पर पूरो को लिटा दिया। पूरो चारपाई की नरमाई को छोड कर कडी जमीन पर लेटी कराहने लगी।

रशीद बाहर देहली के पास खड़ा था—बन्द किए हुए भीतरी किवाड़ के अन्दर से पूरो की दाँतों में भिची हुई लम्बी-लम्बी हुंकार रशीद को सुनायी देती रहीं। उनका मन कर रहा था, पूरो के शरीर में से बहुत नहीं तो कम मे कम आधी पीडा निकाल कर अपने में डाल ले। पूरो अकेली ही पड़ी कराह रही थी।

दाई नई गोट वाले पखे से पूरो के मुख पर धीरे धीरे हवा करती रही। कितनी ही बार रहीम की माँ ने घूँट घूँट कर के पूरो के मुँह मे पानी डाला।

बाहर खड़े हुए रशीद ने तीन जोर की चीखों के बाद बच्चे के टिटियाने की आवाज़ सुनी। उसके बाद पूरो के मुख से कोई आवाज़ न निकली। उसका कष्ट समाप्त हो चुका था। रशीद ने चैन का साँस लिया। उसका जी कर रहा था कि वह भीतर चला जाय। दाई तो शायद बच्चे की देख भाल में लगी होगी, वह जाकर पूरो को संभाले। पूरो अभी तक उसके हाथों रोती ही रही थी, पूरो अभी तक उसके कारण कराहती ही रही थी। पर भीतर उसकी

चाची बैठी हुई थी, भीतर दाई बैठी हुई थी। जब तक वह उसे भीतर न बुलावें, भीतर जाना उसे बड़ी अभद्रता प्रतीत होती थी।

मिनट पर मिनट बीतते गये, पूरो की फिर आवाज़ नहीं आयी। रशीद के दिल में घबराहट उत्पन्न हुई, पूरो जीवित तो थी? उस की आवाज़ इतनी-सी भी क्यों नहीं आती?

इसी प्रकार आधा घंटा बीत गया। दाई ने बाहर आ कर रशीद से कहा "बेटा, बधाई हो, लड़का हुआ है।"

"उसका क्या हाल है?" रशीद ने पूछा।

"ठीक-ठाक है, बेटा! ऐसे ही कुनबे बढते हैं, लड़के छत से तो गिर नहीं पड़ते" दाई ने हौसले के साथ मुस्करा कर कहा, उस हौसले के साथ जिससे उसने सैकड़ों स्त्रियों की पीड़ा को अपने हाथों पर झेला था।

जब रशीद अन्दर गया तो पूरो लेटी हुई थी; उसकी आँखें निढाल थीं उस के पास-ही एक सफेद कपड़े में लपेटा हुआ उस का और रशीद का पुत्र पड़ा अंगूठा चूस रहा था।

रशीद का हृदय गर्व से भर उठा। उसने पूरो पर विजय प्राप्त कर ली थी, इस जुये में उसने सारी की सारी पूरो को जीत लिया था। पूरो अब केवल उसकी भगायी हुई रखेल ही नहीं थी, वह अब केवल उस की घर में डाली हुई स्त्री ही नहीं थी, अब वह उसके पुत्र की माँ भी थी।

रहीम की माँ के कहे अनुसार रशीद ने एक रुपया और गुड़ को भली अपने पुत्र के ऊपर वारी। पूरो की उनींदी आँखें खुलीं, उसने रशीद को देखा।

"अब तू मुझ से क्या कहता है? मैंने तुझे अपना आपा दिया, मैंने तुझ एक पुत्र दिया है, अब मेरे पास बाकी क्या रह गया है?" मानो

पूरो ने मूक जिह्वा से रशीद से कहा। फिर पूरो ने आँखें मीच लीं।

गरम गुड़ और पिसे हुए बादाम के कुछ चम्मच पीकर जब पूरो के शरीर में कुछ जान आयी तो उसने देखा कि उस के बच्चे का नरम-नरम मुँह उसकी बाँह से लग रहा है। पूरो के शरीर में एक कँपकँपी सी आ गयी। उसे लगा कि एक नरम सफेद कीड़ा उसके शरीर पर चढ़ रहा है। पूरो को घृणा सी हुई। उसका मन किया, अपनी बाँहों से लगे हुए कीड़े को वह तोड़ डाले, अपने पास से उसे दूर फेंक दे, ऐसे जैसे कोई चुभे हुएकांटे को नाखूनों में फँसा कर निकाल देता है, जैसे कोई धंसे हुए गोखरू को उखाड़ कर फेंक देता है, जैसे कोई चिमटी हुई किलनी को नोच कर अलग कर देता है, जैसे कोई चिपटी हुई जोक को तोड़ फेंकता है·····

रहीम की माँ को इनके घर पूरे तेरह दिन रहना था। अभी पूरो के लड़का हुए केवल चार दिन हुए थे।

पांचवें दिन पूरो के दूध उतरा। अब तक दाई रुई की बत्तियां बना कर लड़के के मुँह में दूध देती रही थी। आज उसने लड़के को पूरो के स्तन से लगा दिया।

लड़का पूरो की गोदी में पड़ा रहा। उसके शरीर से चिपटा रहा। पूरो ने अपनी अंतड़ियों मे एक खिंचन-सी अनुभव की। उसका मन किया कि वह लड़के को गले लगा कर फूट-फूट कर रोवे। लड़का उसके अपने रक्त का बना हुआ खिलौना था, उसके ही माँस का बना हुआ पुतला था। इस भरे-पूरे संसार में यह एक लड़का ही उसका अपना था। वह अब कभी भी अपनी माँ का मुख न देख सकेगी, वह अब कभी भी अपने पिता का मुख न देख सकेगी, वह अपने भाई-बहनों को भी कभी न देख सकेगी·····वह·····वह केवल अपने लड़के का मुँह देखा करेगी, जिस के रक्त में उस के अपने माता-पिता का रक्त भी मिला

हुआ था। उसके माता-पिता उसे तो तोड़ कर अलग फेंक गये, किन्तु अपने रक्त को कैसे अलग कर सकेंगे जो कि पूरो के अंग-अंग में रचा हुआ था, जो कि पूरो के घर उत्पन्न हुए लड़के के रक्त में मिला हुआ था।

बच्चा पूरो का दूध पीता रहा। फिर पूरो को लगा," यह लड़का जबरदस्ती ही उसकी नसों में से दूध खीच रहा है, जबरदस्ती··· ····· जबरदस्ती·····इस के पिता ने भी तो उसके साथ जबरदस्ती की थी, लडका भी तो अपने पिना का ही पुत्र था, अपने पिता का रक्त था, अपने पिता का मांस था, अपने पिता का रूप था। जबरदस्ती यह उसके शरीर में धरा गया था, जबरदस्ती ही उसके पेट में पल गया था, और अब जबरदस्ती ही उसकी नसों से दूध खींच रहा था·····

पूरो ने अपने माथे को छुआ। आग में पड़ी हुई ईंट की भाँति उसका माथा गरम था। शायद उसे ज्वर चढ़ा हुआ था—पूरो के मस्तिष्क मे एक विचार घूमने लगा; यह लड़का·····उस लडके का पिता·····सब पुरुष जाति·····पुरुष·····पुरुष जो स्त्री के शरीर को कुत्ते की हड्डी की भांति चूसते है, कुत्ते की हड्डी की भाँति चबाते है।

लड़का पूरो का दूध पीता रहा। पूरो का मन रहट के डोंगों की भाँति भरता और खाली होता रहा।

अनाथ

पूरो के गोलमटोल लड़के को सब जावेद कह कर ही पुकारते थे। पूरो उसे सुतली की पलंगिया पर डालकर देखती रहती थी। टाँगें चला चला कर वह अपने ऊपर की चादर उतार देता और उसे पैरों में रौंद देता। पूरो ने उसके पांव में चाँदी की पतली-सी पाज़ेब डाल रखी थी। जब वह टांगें मारता पाजेब की हल्की-सी छन-छन पलंगिया पर सुनायी देती। लातें चलाते समय जोर लगाने के कारण उसका मुँह लाल हो जाता और उसे हुचकियां आने लगतीं।

फिर पूरो उस के हाथों की ओर देखती। उसकी हथेली वास्तव में बहुत ही गोरी थी, और हथेली के पीछे की ओर मांस इस तरह उभरा हुआ था कि पूरो को उस के हाथ बिलकुल मोम के उस बबुए जैसे लगते थे जिसे छुटपन में उसने सियाम से आते हुए कलकत्ते के एक बाजार में खरीदा था। पूरो ने उस बबुए को क्रोशिए से बुनकर एक कुरता पह-

नाया था, छोटे मोतियों को एक धागे मे पिरो कर उस बबुए को माला पहनायी थो। जावेद के हाथ बिलकुल उस बबुए के हाथों की भाँति थल-थल करते थे। मोम का वह बबुआ शायद अभी तक नही टूटा होगा। पूरो सोचने लगती, कभी-कभी काँच और मिट्टी की वस्तुओं का जीवन भी कितना लम्बा हो जाता है, शायद आज भी उस बबुए से पूरो की कोई बहिन खेल रही होगी।

मुँह अँधेरे ही पूरो खेतों में जाती। रशीद लड़के के पास बैठता। एक दिन अभी अंधेरा ही था, पूरो खेतों से लौट रही थी। गाँव के बाहर मुसलमानों के कुएं पर उसने हाथ पैर धोये और जब वह अपने घर को लौट रही थी, उसे अपनी गली की एक लड़की कम्मो दिखायी दी।

शरद ऋतु की हल्की हल्की ठण्ड थी। कम्मो पानी की बटलोई को पत्थर के एक छोटे से घड़े पर रख कर खड़ी हो गयी थी। पूरो जब उस के पास से गुजरी कम्मो ने कांपते हुए हाथ से पानी की उस बटलोई को उठा लिया। शायद उसके कन्धे बटलोई का भार सहार न सके, बटलोई कम्मो के कन्धे से गिरने लगी। बटलोई के नीचे टिकी हुई कम्मो की बायी हथेली भार के कारण बीच से दोहरी होती हुई प्रतीत होती थी। दायें हाथ से बटलोई को सहारा देते हुए कम्मो के मुँह से निकला—"ओ, माँ!"

पूरो के पाँव रुक गय। पूरो कम्मो के पास हो गयी। उस का मन किया, दस बारह बरस की इस लड़की कम्मो के कन्धे से बटलोई उतार ले। कम्मो उसके साथ साथ चलती जाय, कम्मो जो पाँव से नंगी थी, जो सदा खद्दर के सुथने के पाँयचे ऊपर को मोड़े रखती थी, जिसकी धारियों वाली कमीज के मोढ़ों पर लगा हुआ पैबन्द कभी उधड़ जाता था, कभी फिर लग जाता था, जिसकी चुनरी के पल्ले सदा तार-तार

होकर लटके रहते थे। जिसके बाल सदा बान जैसे खुश्क और बिखरे रहते थे, और जिसे पूरो ने सदा दूर से ही देखा था, आज वह उसके पास जाकर उसके उन कन्धों पर से बटलोई उतार ले जिन कन्धों की हड्डियाँ पीतल की बटलोई से टक्कर खा रही थीं।

"बड़ी देर हो गयी है ?" बरतन के भार के नीचे दबी कम्मो ने मानो पूरो में आज देर न होने का एक सहारा माँगा।

"अभी तो दिन भी नहीं निकला" पूरो ने स्थिर स्वर में कहा।

न जाने लड़की मे कुछ साहस आ गया, उसने अपने कन्धों का भार फिर धरती पर रख दिया। बटलोई के मुँह में से कोई एक चुल्लू भर पानी छलक कर कम्मो के कन्धों पर गिर पड़ा। घिसी हुई धारियों वाली कमीज को पार करके पानी की ठण्ड कम्मो के शरीर मे फैल गयी। जाड़ों की ठिठुरन कम्मो के बदन में दौड़ गयी।

पूरो रुक गयी। कम्मो पूरो की ओर देख कर हँस पड़ी, एक घड़ी पहले वह देर हो जाने के डर से और बरतन के बोझ से सहमी हुई थी। पूरो ने कम्मो के मुख पर सदा वही भय का भाव देखा था। उस समय उसके चौड़े होठों पर फैली हुई हँसी पूरो को ऐसी लगती जैसे कि उस लड़की को हँसना आता ही न हो, वह यों ही अपने होंठ मरोड़ रही हो मानो किसी को मुँह चिढ़ा रही हो।

"कम्मो ! तू रोज इसी वक्त आती है ?" कम्मो को जो आवाजें पड़ती थीं उनसे पूरो को कम्मो का नाम मालूम हो गया था।

"लगता है आज कुछ देर हो गयी है, मुझे मार पड़ेगी" कम्मो ने फिर बटलोई पर हाथ धर लिया। मानो समय का जिक्र ही उसके लिए डरावना हो गया हो। उसके मुख पर से उसकी हँसी कच्चे रंग की भाँति उतर गयी और फिर वही पुराना भय का भाव उसके मुख पर आ गया।

"कम्मो ! वह तेरी कौन लगती है ?"

"चाची" कम्मो ने कहा और उसकी बाँह बटलोई के भार के नीचे मुड़ गयी, कौन जाने उस बोझ के कारण या चाची के नाम से !

"तू कहे तो मैं तेरी बटलोई ले चलूँ" पूरो ने कहा, पर अपना हाथ आगे न बढ़ाया। पूरो को इस बात का पूरी तरह ध्यान था कि लोग जानते थे कि उसका नाम हमीदा है—हमीदा—रशीद की पत्नी, ···और कम्मो एक हिन्दू लड़की थी।

"बटलोई भ्रष्ट हो जायगी" कम्मो ने निःशंक कहा।

"पानी तो भ्रष्ट नहीं होगा, मैं पानी को हाथ नहीं लगाऊँगी, तू जाकर बाहर से बटलोई माँज लीजो।" कहते-कहते पूरो हँस पड़ी। कम्मो भी हँस पड़ी, पर वह बटलोई उठाये रही।

दोनो अभी थोड़ी ही दूर गयी होंगी कि कम्मो का पैर मुड़ गया। गिरती हुई बटलोई को पूरो ने रोक लिया, पर कम्मो कंकड़ पत्थरों पर गिर पड़ी। कम्मो के पैर में मोच आ गयी।

पूरो ने बटलोई धर कर कम्मो का पैर थामा, हथेली से कम्मो के पैर को टखने के पास मला। देखते-देखते कम्मो उठने योग्य हो गयी। पूरो बटलोई उठाकर उसके साथ-साथ चलने लगी।

"ओ, माँ" कहकर कम्मो रोने लगी। पूरो को लगा जैसे कम्मो अपने तमाम दुखों के लिए अपनी परलोकवासी माँ को उलाहना दे रही है।

"पैदा कर के हमारे लिए छोड़ गये" पूरो ने कई बार कम्मो की चाची को कहते सुना था। कम्मो के माता-पिता कोई न था। कम्मो का पिता तो शायद जीवित था, पर कहते थे उसने शहर में कोई औरत रखी हुई थी। वह कम्मो की बात न पूछती थी, और इसी कारण कम्मो का पिता भी उस से कोई वास्ता न रखता था। पूरो सोच रही

थी, जब मांएँ मर जाती है तब बाप भी पराये हो जाते हैं·····सोचते-सोचते उसका ध्यान अपने जीवन की ओर चला गया, माएँ जीवित हों फिर भी पिता पराये हो जाते है, माएँ भी परायी हो जाती है ·····

गाँव अब स्पष्ट दीख पड़ने लगा था। प्रकाश भी बढ़ गया था और उनकी गली का मोड़ भी आ गया था। फिर दोनों को यह डर था कि कोई पूरो को बटलोई उठाये न देख ले। कम्मो ने जब बटलोई संभाली, उसके पाँव काँप रहे थे। पूरो ने जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाये और कम्मो से अलग होकर अपनी गली में मुड़ गयी।

उसी दिन दोपहर के समय पूरो का लड़का कुछ जिद करके रो रहा था और पूरो उसे बहलाने में लगी हुई थी जब दरवाजा खोलकर कम्मो उसके घर में आ गयी।

पूरो ने आगे बढ़ कर कम्मो को अपने से चिपटा लिया। पूरो को लगा, उसके पुत्र की अपेक्षा कम्मो को बहलाये जाने की अधिक आवश्यकता है, कम्मो जिस के आँसू पोंछने वाला कोई नही था।

कम्मो के आँसू पूरो की बाँह पर गिर रहे थे। पूरो के जी में यही विचार रह रह कर आ रहा था कि जैसे वह जावेद की माँ है वैसे ही कम्मो की मां भी भी बन जाय,—कम्मो ऐंठ कर रोने लगे, वह उसे उठा उठा कर बिठाये, उसे गोद में ले लेकर फिरे, उसे चूमते न थके ··। वह जावेद की माँ है, वह कम्मो की मां भी बन जाय, वह सब अनाथों की मां बन जाय·····। वह एक अच्छी पुत्री नहीं बन सकी थी, वह एक अच्छी माँ बन जाय·····

कम्मो हिन्दू थी और पूरो·····पूरो एक मुसलमानी थी, यद्यपि अभी तक अपने आप को वह पूरो ही समझती थी। कम्मो पूरो के घर का कुछ खा नहीं सकती थी, पर पूरो का जी करता था कि वह कम्मो को अपने हाथ से कौर खिलावे, उसे अपने हाथ से दूध का कटोरा

पिलावे·····

पूरो ने फिर कम्मो का पैर मला···हथेलियों से गरम-गरम घी रगड़ा···रुई से सेंक किया।

कम्मो घर जाने की जल्दी करने लगी। उसकी चाची की लम्बी झाड़ उसकी आँखों में सलाखो की भाँति फिर रही थी। कम्मो दुलाई निराँदने वाली सूई लाने के बहाने चली आयी थी।

पूरो ने कम्मो को बदाम वाला गुड़ खिलाया, और फिर दुलाई निरांदने वाली सुई भीतर से निकाल कर दी।

जाड़ा दिन-दिन बढ़ रहा था। लोगों ने मोटे कपड़े पहन लिये थे। लोगों ने रुई भरवाकर काली छींट की फतूहियाँ सिलवायी थी, लोगों ने मोटे खेसो मे अपने कंधों को लपेट लिया था।

कम्मो अपनी आयु के वर्ष खाये जा रही थी। न उसके शरीर पर यौवन चढ़ता था, न ही उसके शरीर पर कभी नये वस्त्र दिखायी दिये थे। उसके नंगे पैर अब ठड से ठिठुरने लगे थे।

पूरो ने कम्मो के लिए एक नयी जूती बनवायी, पर कम्मो के लिए अपने पैरों में उस जूती को पहनना आसान काम नही था।

बहुत सोच विचार के बाद कम्मो को वह जूती पहना दी गयी, और कम्मो ने अपनी चाची से कह दिया कि सामने ईख के खेत में पड़ी मिली है। चाची ने यह बात मानी तो नही—भला गाव में ऐसी कौन होगी जो अपनी नयी जूती ऐसे फेंक आयी—पर वह चुप कर रही। कम्मो जूती पहनती रही।

किन्तु हर रोज़ तो नयी चीज़ें पड़ी नही मिल सकतीं। पूरो कम्मो की ठिठरती हुई हड्डियों को देख कर रह जाती।

केवल रात्रि के अन्तिम प्रहर का अन्धकार यह बात जानता था कि पूरो कम्मो की एक दो बटलोइयाँ उठा कर उसे साँस ले लेने देती थी।

कम्मो दिन मे एक आध फेरा पूरो के घर का लगा लेती थी—कभी बेलन मे रुई साफ कर लेती, कभी चक्की में चने दल लेती, कभी हावनदस्ते मे मसाला कूट लेती। पूरो उसका हाथ बटाती। चाची का काफ़ी काम हो जाता। नन्हा बच्चा जावेद कम्मो से हिल गया था। कभी कम्मो न आती तो पूरो उसे छोटे लड़के का उलाहना देती। जहा तक कम्मो से बन पड़ता वह कभी नागा न करती।

अब पूरो और कम्मो माँ बेटियों की भाँति एक दूसरे से लड़ लेती थी, दो सहेलियो की भाँति एक दूसरे से चिपट-चिपट कर बैठ जाती थी।

कई बार पूरो का मन करता था कि वह कम्मो के लिए कुछ बनाये। कम्मो के सूखे हुए शरीर पर अब एक हल्का-सा उभार आने लगा था—कम्मो के पिचके हुए गालों पर गोलाई आ गई थी। पूरो के घर आकर कम्मो अपने बाल सँवारती, पूरो चिकनाई का हाथ लगा कर कम्मो की मेढियाँ करती।

एक दिन सवेरे मुँह अँधेरे कम्मो पूरो को पकड़ कर बेतरह रोने लगी। पूरो ने ध्यान पूर्वक उसकी ओर देखा, कम्मो गन्ने की भाँति पेरी हुई जान पड़ती थी।

पूरो ने उसे अपने कलेजे से लगाया, उसका माथा चूमा—किन्तु कम्मो का रोना किसी प्रकार थमने में न आता था। आंसुओं से उसकी चुनरी भीग गयी थी, आंसुओं से उसके हाथ भीग गये थे।

"मेरी चाची कहती है, जो तू अब उसके घर गयी तो मै तेरा खून पी डालूँगी।" "कम्मो ने कहा और पूरो की छाती से लग कर सिसक-सिसक कर रोने लगी। वह जी भर कर रोयी, मानो पूरो उसका एक सहारा हो और उससे अलग करने के लिए कम्मो को कोई हाथ पकड़ कर खींच रहा हो।

"पर क्यों ? मैंने क्या किया है ?" पूरो ने ठहर कर पूछा।

"चाची कहती है, सुना है वह घर से भाग कर आई है, तू भी किसी दिन उसकी तरह भाग जायेगी" कम्मो ने रोना बन्द कर के कहा। प्रभात का प्रकाश उजला होने लगा था। पूरो टूटी हुई पूनी की भाँति हो गयी थी।

कटु सत्य

पूरो के हृदय पर एक के बाद एक चोटें पड़ती रही थीं। उसका मन और मस्तिष्क इतने अल्प समय में ही कम-से-कम दस बरस बड़े हो गये थे। पूरो की आयु बीस वर्ष से अधिक नहीं थी, किन्तु आयु उसे जो कछ नहीं सिखा सकती थी, वह उसे जीवन के कुठाराघातों ने सिखा दिया था। एक बुद्धिमान विचारक की भाँति पूरो गंभीर हो गयी थी। पूरो का मन बड़ी विलक्षण बातें सोचता था, बहुत कुछ सोचता था। किन्तु पूरो को अपने विचारों को व्यक्त करना न आता था। पानी के टकराने से जैसे झाग उठते हैं और फिर पानी में समा जाते हैं, उसी प्रकार पूरो के हृदय में उमंगें उठतीं और विलीन हो जाती थीं।

कभी-कभार पूरो रहीम के घर उसके घर की स्त्रियों के पास चली जाती थी। उनके पड़ोस की एक लड़की के पीले मुख से वह बहुत आकर्षित हुई थी। कई बार पूरो का मन करता कि उसे बुला ले। दुखी को

दुखी ही पहचानता है। उस लडकी के म्लान मुख पर बड़ी-बड़ी थकी हुई-सी आँखें थीं जो पूरो की ओर कुछ ऐसे झुक पड़ती थी मानो उन्हें भी पूरो की आवश्यकता हो। होते-होते पूरो को पता लगा कि पिछले से पिछले साल इस लड़की का विवाह हुआ था। कोई कहता था कि उस पर भूत-प्रेत था, कोई कहता था उसे कोई भीतरी रोग था। न जाने उसे क्या हो गया था, उसका शरीर बहुत दुर्बल हो गया था, उसका मुख पीला पड़ गया था।

पूरो ने इसी तरह आते-जाते उस लड़की से परिचय कर लिया, और उस परिचय को उसकी माँ के जरिये से अपने खेस बुनवाकर बढा लिया। उस लड़की को सब तारो पुकारते थे।

कुछ दिनों बाद पूरो ने सुना, तारो को कई बार दौरे भी पड जाते हैं। उन दिनों तारो अपने मायके आयी हुई थी। अब उसे अपनी ससुराल जाना था। पूरो ने सुना, हर बार अपनी ससुराल जाते समय तारो को इसी प्रकार होता था, और जितनी बार वह अपनी ससुराल से लौटकर आती थी, उसके शरीर का माँस पहले से भी कम होता था, हर बार उसके शरीर की हड्डियाँ पहले से भी अधिक निकली हुई होती थीं।

देखने वाले अपने मन में समझते थे कि बस दो-तीन फेरों की बात और है, फिर और सूखने के लिए उसके शरीर पर माँस रह ही नही जायेगा, फिर और दुखने के लिए उसकी हड्डियों में जान ही न रह जायेगी। किन्तु मुंह से कोई कुछ न कहता था, न ले जाने वाले ससुराली कुछ कहते थे, न भेजने वाले मायके के कुछ बोलते थे।

एक दिन तारो बिलकुल अकेली बैठी हुई थी। पूरो उस के पास जा कर बैठ गयी। पहले भी कई बार उस से थोड़ी-बहुत बातचीत कर चुकी थी, आज उससे बातें करने के लिए बैठ ही गयी।

"तारो! कोई सयाना तो बताता होगा, तुझे क्या हुआ है?"

"कुछ भी नही।"

"किसी ने नब्ज़ तो देखी होगी ?"

'वर्क वाले मुरब्बे और अर्क की बोतलें पीते-पीते मैं थक गयी हूँ।"

"तारो, कुछ तो बता, क्यों अपनी जान की गाहक बनी है ?"

"अच्छा है, धरती का कुछ भार हल्का हो जायेगा, बहिन ! तू क्यों चिन्ता करती है ?"

"धरती पर तो न जाने कितना भार पड़ा हुआ है, तेरे न रहने से कितना कम हो जायेगा। अपनी मा से पूछ कर देख जिसने तुझे अनेक कष्ट झेल कर पाला है।"

"पाला होगा" तारो ने बेपरवाही से कहा। "दो चार दिन रो-धो कर अपने आप चुप हो जायेगी। वह कौन सी सुखी है।"

"पर ऐसी क्या बात है, माँ से कह तुझे कछ दिन और न भेजे।"

'फिर क्या फर्क पड जायेगा। जैसी यहा हूँ, वैसी वहाँ।"

"हाँ, लड़कियो को कोई कितने दिन रख सकता है।"

"लडकियाँ,·····हूँह·····" और तारो कुछ बुड़बुडाकर चुप हो गयी। तारो के मन मे न जाने क्या उलझन पड़ी हुई थी, न जाने वह क्या कहना चाहती थी, पर कह न पाती थी।

"लडकियो का क्या है, माँ बाप चाहे जिसके हाथ मे उसके गले की रस्सी पकड़ा दें।" तारो ने थोड़ी देर ठहर कर कहा।

"वहाँ का पानी अच्छा है ?" पूरो ने पूछा।

"अच्छा न भी हो तो भी अच्छा ही है" तारो ने उत्तर दिया। "हो सकता है तुझे वहाँ का पानी माफ़िक न आया हो" पूरो ने बात को चलाये रखने के लिए कहा।

"लड़कियो को सदा पानी माफिक आता है" तारो ने कुछ ऐसा कहा कि पूरो उस के मुख की ओर देखती रह गयी।

"तारो, मैं तेरी अपनी ही हूं, तू कुछ बताती क्यों नहीं ?" पूरो ने ऐसे अपनेपन से कहा कि तारो का हृदय खुल गया।

"बहिन ! मैं क्या बताऊँ, लड़कियों को भगवान ने कुछ कहने योग्य जबान ही नहीं दी।"

"ठीक है तारो !"

"माँ-बाप के पास मेरे लिए कोई जगह नहीं है क्योंकि किसी भी लड़की के लिए माँ बाप के पास जगह होनी ही नहीं और मेरे पति के पास भी मेरे लिए जगह नहीं है, क्योंकि उन के दिल और घर में एक और औरत बसी हुई है।"

"हैं ! तारो, क्या तेरे आदमी का पहले ब्याह हो चुका था ? तो फिर तेरे मा बाप ने तुझे वहां क्यों दे दिया ?"

"उन्हें पहले खबर नहीं थी और न ही उसका पहले ब्याह हुआ था, उसने तो बस एक औरत को घर में रखा हुआ है।"

"पर उस के मा बाप को तो खबर होगी ?"

"जानते सभी थे। वह औरत उनकी जात की नहीं है, नीच जात की है। उस के मा बाप कहते थे कि बहू घर में अपनी ही जात आनी चाहिए।"

"पर उन्होंने यह न सोचा कि पराई बेटी का क्या हाल होगा।"

"दूसरे के दुख की कौन परवाह करता है, बहिन ! फिर वह लोग कहते हैं, हम रोटी देते हैं, कपड़ा देते हैं, खुला हाथ है, फिर किस बात का दुख है ?"

"जैसे औरत को केवल रोटी और कपड़ा ही चाहिए ?" पूरो ने कहा।

"मेरे हृदय में आग सी धधक उठती है। तू नहीं देखती सब देखते हैं, पूरो दो बरस ही गये हैं, रोटी और कपड़े के लिए मैं उसे

अपना शरीर बेचती हूँ, देख मैं वेश्या हूँ ·····देख मैं वेश्या हूँ ·····" कहते कहते तारो गिर पड़ी, उस की मुट्ठियाँ भिंच गईं, उस की आंखें ऊपर को चढ गयी, उसका शरीर लकड़ी के फट्टे की भांति अकड़ गया।

पूरो डर गयी। तारो के घर में उस समय और कोई नहीं था। पूरो यह न जानती थी कि उसे क्या करना चाहिए। वह डर रही थी, घबरा रही थी। वह तारो की टाँगें दबाने लगी, उसके कंधे दबाने लगी, उसके तलवे सहलाने लगी।

तारो को होश आ गया।

"तू मुझे हाथ मत लगा, मैं वेश्या हूँ, तू देखती नही·····तू देखती नही····· " तारो ऐसी ही बातें कर रही थीं।

पूरो सोच रही थी कि अभी इसे होश नही आया है, कि इतने मे तारो की मां आ गयी।

"हाय रे, मैं क्या करूं, एक तो हमें हमारी किस्मत ने मार डाला, अब इसकी बातें मार डालेंगी।" तारो की मां निढाल-सी होकर बैठ गई। पूरो चुप रही।

"इसने और इस के भाई ने तो हमारी जान हलकान कर रखी है। लाहौर कालिज में पढ़ने क्या गया है, बहिन को भी पढ़ा पढ़ा कर बिगाड़ दिया है। देख, कैसी ऊलजलूल बातें करती है।" तारो की माँ ने फिर दुख पूर्वक कहा।

"अम्मा, जुल्म भी तो बिचारी पर बहुत ही हुआ है।" पूरो ने कहा।

"बेटा! हमने लडकी दे दी, हमारा मुँह बन्द हो गया, हम अब क्या बोल सकते है, वह अच्छी तरह रखे, दुःख दे, मर्द की जात है।" तारो की मां ने कहा।

"मेरे मुंह पर ताला डाल दिया गया, मेरे पैरों में बेड़ी डाल दी गयी उसका क्या बिगड़ा। भगवान ने उसे बन्धन में न डाला। उसे बांधने के लिए भगवान जन्मा ही नहीं। सारी रस्सियाँ भगवान ने मेरे पैरों में ही डाल दीं।" तारो की मुट्ठियां भिंच गयीं, उसकी टांगे फिर अकड़ गयीं। उस की मां ने उस के मुंह पर पानीके छींटे मारे, चुल्लू भर-भर कर उसके मुंह में पानी डाला।

पूरो ठक-सी हो गयी थी। आज उसने पहली बार अनुभव किया था कि लड़कियां इस तरह भी सोच सकती हैं, लड़कियां इस तरह भी बोल सकती हैं। वैसे तो पूरो के मन में भी गुबार उठा करते थे, पर उन्हें व्यक्त करना उसे न आता था।

'यह धोखा है, निरा धोखा है, मेरा ब्याह नहीं हुआ, तुम सब झूठ बोलते हो, तुमने मुझे क्यों पकड़ रखा है? परे हटो·····" और बेसुध तारो अपने पैरों को धरती पर पटकने लगी।

"तारो, होश में आ, कैसी बातें मुंह से निकालती है, कोई सुनेगा तो क्या कहेगा, वह तेरा पति है, जरा मुंह में लगाम दे, ऐसे न बोल" तारो की मां ऐसे कह रही थी मानो बेसुध पड़ी तारो को झिड़क रही हो, वैसे उसकी आंखें भर आयी थी।

तारो की चेतना कभी लौट आती थी, कभी वह फिर अचेत हो जाती थी।

"वहां जाकर ऐसा पागलपन मत बखेरना। अपनी जीभ को ठिकाने रख। वह समझे या न समझे, ईश्वर तो गवाह है कि वह तुझे ब्याह कर ले गया है" तारो की मां कह रही थी।

"मां, ईश्वर ने अगर मेरे ब्याह की गवाही दी है तो झूठी गवाही दी है। मां, मेरा ब्याह नहीं·····" तारो पागलों की भांति छत की लम्बी-लम्बी कड़ियों की ओर देखने लगी। पूरो तारो के चेहरे की ओर

देख रही थी, तारो जो कि सब कुछ सोचने, सब कुछ कहने के बाद भी विवाह के इस महान असत्य से मुक्त न हो सकती थी, वरन् उसकी आयु के दिवस बड़ी द्रुत गति से जीवन के सत्य असत्य को पीछे छोड़ते आगे बढ़ते जा रहे थे ।

[illegible] । पूरो हृदय पर बोझ लिए हुए उठ खड़ी हुई । पूरो का मन मानो इस भरे-पूरे ससार से एकाएक उचाट हो गया ।

पिछले कुछ दिनों से पूरो अपने घर की दीवारों से परच गयी थी । रशीद की छोटी-छोटी ठठोलियों ने, घर के छोटे-बड़े काम काज ने, और सबसे अधिक जावेद की तोतली बोली ने मानो पूरो के उचाट मन को पतले-पतले धागों से लपेट लिया था, उसका मन कुछ टिक गया था । आज तारो की बावली बातों ने जैसे पूरो के मन पर लिपटे कई धागों को तोड़ दिया । उसका मन विकल हो गया । रात को रोटी-टूकडा करते समय उसे नमक मसाले का अदाज भी भूल गया, दाल गुलभत्ता हो गयी, रोटियाँ कच्ची-पक्की रह गयीं ।

आगे के दिनों में भी उसकी उदासीनता में कुछ अन्तर न पडा । फिर न जाने उसने क्या-क्या संकल्प धारण कर लिये । वह दिन में एक बार भोजन करने लगी, पहर रात रहते जाग उठती, ध्यान करती, और घंटों अपनी आँखें और कान बन्द किये रहती मानो उसने ससार से अपना चित्त हटा लिया हो ।

पूरो की नीद कम हो गयी । उसका खाना कम हो गया । धीरे-धीरे उसनें अपने लिए सूखे छानस में नमक डाल कर केवल एक रोटी पकानी प्रारम्भ कर दी । उस रोटी में न वह घी चुपड़ती, न ही उसे दूध या दही के साथ खाती । उसी एक रोटी के सहारे वह पूरा दिन काट लेती । कुछ ही दिनों में पूरो की आँखों के नीचे नीले-नीले हलके पड़ गये, उस का

सारा शरीर कान्तिहीन हो गया।

इधर कुछ दिनों से रशीद भी बातचीत में पूरो का मन बहलाने में अधिक व्यस्त हो गया था। रोजों और नियम-व्रत आदि को लेकर वह हँसी ठठोली करता, पूरो के मन को पलटने की चेष्टा करता, और प्यार भी पहले से अधिक करने लगा था। किन्तु रशीद के सारे जतन विफल रहे। पूरो के मन और मस्तिष्क पर रशीद के प्रयत्नों का कोई प्रभाव न पडा। पूरो के आचार-व्यवहार में कोई अन्तर न आया।

प्रतिदिन के इस समादर के बाद मानो अब रशीद का हृदय बुझने लगा था। दिन-दिन उतरता हुआ पूरो का मुंह रशीद से देखा न जाता था। उसके घर मे मानो वीरानी ने अपने पैर जमा लिये थे। रशीद के चेहरे पर भी एक वेदनापूर्ण मौन दीख पडने लगा था। दोनों प्राणी घर की, समाज की, शरीर की दीवारो मे घिरे हुए थे, पर दोनों के बीच जैसे अब एक भीत खड़ी हो गयी थी।

पूरो के यहाँ एक भैंस थी। वह नियम से दूध जमाती, दही रिडकती, रशीद के खेतों में काम करने वाले जब पशुओं के लिए चारा लेकर आते तो पूरो उन को और उन के बच्चों को गिलास भर-भर कर लस्सी देती, ऊपर से मक्खन के पेडे भी डाल देती थी। पूरो के मुँह में कुछ न पडता। रशीद का मन भी खाने-पीने से हट-सा गया था। घर के चूल्हे में आग जलती अवश्य थी, पर घर की बोल-चाल पर और जीवन की हरियाली पर जैसे कोहरा जम गया था।

जावेद के भोले मुख पर भी जैसे अपने माता-पिता के उदास मुख की परछाईं पड़ गयी थी। जावेद के लिए भी कोई विशेष लाड़ न था, यद्यपि पूरो उस के सारे काम नियम से करती थी और रशीद उसे दिल से प्यार करता था।

एक रात सोते-सोते रशीद को ज्वर हो गया, उस का शरीर जलने

लगा। सवेरे जब पूरो ने रशीद के माथे पर हाथ रख कर देखा तो रशीद को बहुत तेज बुखार चढ़ा हुआ था।

गाँव के हकीम की दवा-दारू हुई। रशीद को ज्वर आते तीन दिन हो गये थे जब हकीम ने शंका प्रकट की कि रशीद को शायद मियादी बुखार हो गया है।

रशीद की बीमारी ने पूरो के नेम-धरम और वैराग्य को अपनी ओर खीच लिया। पूरो दवा-दारू देती, रशीद के शरीर को दबाती, चौके चूल्हे को देखती थी। जावेद का मुँह उतरा हुआ दीख पड़ने लगा। दुपहरी चढ जाती, जावेद के मुख पर फिटकार बरसने लगती, किन्तु पूरो को उसकी सुधि लेने का अवकाश न मिलता था। और कई रातें बीत गयी और कई दिन बीत गयी, और कई दिन बीत गये, रशीद का बुखार न हटा।

"पूरो ! मेरा गुनाह बख्श दे। मेरा कसूर माफ कर। पूरो····· पूरो·····" रशीद ने बुखार की तेजी में कहा। रात्रि का तीसरा पहर था। पूरो घबरा उठी। इतने दिनों की लगातार चिन्ता और रातों के जागरण ने उसे पहले ही थका डाला था। वह उठकर घबरायी हुई-सी रशीद की खाट के पास बैठ गयी। रशीद के माथे पर हाथ फेरती रही, रशीद के पैर दबाती रही, पर रशीद को अपना होश न था।

"अच्छा पूरो, मैं चलता हूँ·····पूरो, मेरी रूह·····" और रशीद टूटे-फूटे शब्द बोलता रहा। पूरो का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा।

"बस कर, रशीद, मेरे घावों पर नमक मत छिड़क" पूरो ने आर्त्त स्वर में कहा। पर रशीद को बिलकुल होश न था, वह उसी प्रकार अस्पष्ट शब्द बोलता रहा। कोई कोई बात पूरो की समझ में आ जाती, और कई बातें रशीद के कठ से उठकर उसके होंठों पर ही शेष

हो जातीं।

प्रलय-सी काली अंधकारमय रात थी। पूरो घर में अकेली थी, पर उसे ऐसा लग रहा था मानो वह इस विशाल संसार में अकेली हो। रशीद के सिवा उसके घावों पर फाहा रखने वाला और कौन था।

पूरो ने रशीद के माथे पर घड़े के ठंडे पानी में भिगो-भिगो कर पट्टियाँ रखी। उसका माथा चूल्हे की ईंट की भाँति गरम था। वह पट्टियाँ भिगोती रही। कटोरे का पानी मिनटों में ही एक काढ़ा-सा बन गया। पूरो ने पानी बदला। उसकी आँखों से आँसू ढुलक-ढुलक कर रशीद के माथे पर गिरते रहे।

सवेरे पौ फटते तक, न जाने पानी की ठंडक के कारण या आँसुओं के गीलेपन से, रशीद का ज्वर उतर गया। उसका शरीर धुल गया था। उसकी बेहोशी आराम की नींद में बदल गयी।

जब रशीदकी आँख खुली उसे अपना शरीर हल्का-सा प्रतीत हुआ। आज उसके माथे में पीड़ा की चीसें नहीं थी। रशीद ने आराम का एक लम्बा साँस लेकर करवट बदली। पूरो रशीद के सिरहाने की ओर जमीन पर बैठी-बैठी चारपाई का सहारा लिये सो गयी थी। उस के एक हाथ में अभी तक कपड़े का पट्टी थी और पाँव के पास पानी का कटोरा पड़ा हुआ था।

पूरो को देखकर रशीद का जी भर आया। उसने उसके चेहरे की ओर देखा। उसका उतरा हुआ मुख नींद में डूबा हुआ था।

अपनी बीमारी और पूरो की टहल रशीद के मन में एक उथल-पुथल सी मचा रही थी। पूरो के मुख से, और कपड़े की पट्टियों से रशीद ने भली-भाँति जान लिया कि बीती रात कितनी कठिन रही होगी। रशीद ने अपना कमजोर-सा दाहिना हाथ उठा कर पूरो के सिर पर धर दिया। पूरो के बिखरे हुए बालों में रशीद की उंगलियां घूमती

रहीं। उसकी उंगलियाँ पूरो के कानों को, उसके माथे को धीरे-धीरे छूती रही। पूरो का सारा शरीर निद्रा की गोद में मग्न था। रशीद की आँखों के कोनो से ढुलक-ढुलक कर आँसू बिस्तर पर पडते रहे। रशीद एक विचित्र-से आनन्द का अनुभव करता हुआ जागता रहा।

रशीद ने पूरो के शरीर पर तो अधिकार कर लिया था, पर उसकी यह वासना थी कि वह पूरो की आत्मा पर भी पूर्ण अधिकार प्राप्त कर ले। पूरो का उदास रहना उसे खाये जाता था। इस समय पूरो तोडी हुई सरसों की डंडी की भाँति रशीद की चारपाई से लगी सो रही थी।

रशीद में शक्ति नही थी, पर उसके हृदय में यह भाव आ रहा था कि वह पूरो को अपने कलेजे से लगा ले। पिछले कुछ दिनों की घोर उदासी के कारण रशीद का हृदय अत्यन्त पीड़ित था। इस समय रशीद को पूरो के मुख पर स्पष्ट दिखायी दे रहा था कि पूरो के तन-मन में रशीद के सिवा और कुछ नही था। रशीद ने अपनी बाँह और आगे बढ़ा कर पूरो के गले से लगा दी। शायद बाँह कुछ जोर से लिपटी, पूरो जाग गयी। वह काँप उठी। पर रशीद ठीक था, उसका ज्वर उतर चुका था, वह बड़ी निढाल आँखों से पूरो को देख रहा था।

रशीद को खाट पर पड़े पूरे दस दिन हो गये थे। उसका ज्वर उतर गया था। वह बहुत-ही दुर्बल हो गया था, पर उसका मन बहुत उल्लसित था। पूरो ने अपना सम्पूर्ण प्रेम रशीद की ओर मोड़ लिया था। रशीद के पास बैठ-बैठ कर पूरो ने दिन रात एक कर दिये थे। पूरो जावेद को बना-सँवार कर रशीद के पास बिठा देती थी। उसने जावेद को कितने ही छोटे-छोटे शब्द बोलने सिखा दिये थे। जावेद रशीद के पास-पास घुटलियों चलता, उसकी नकल करता था, माँ के सिखाये हुए शब्दों को तोड़-तोड़ कर बोलता था। रशीद का मन उत्फुल्ल था,

शरीर फूल की भांति हल्का था। वह मन ही मन अपनी बीमारी को दुआएँ देता था। उसके आँगन में खुशी दुगनी-तिगनी होकर लौट आयी थी।

पूरो का मन करने लगा कि वह सचमुच भूल जाये कि रशीद ने उसके साथ बुरा किया था, वह रशीद को बहुत प्यार करने लगे। रशीद उसका पति था, रशीद उसके पुत्र का पिता था। बस यही एक सत्य था और सब कुछ झूठ·····

एक और पिंजर

अगले कुछ दिनों में रशीद ने एक-दो फेरे अपने गाँव छत्तोआनी के लगा लिये थे। उस के भाई के साझे में उस की जमीन थी, उस का अनाज दाना लेकर रशीद ने बेच लिया था। पर पूरो जिस दिन से सक्कड़आले आई थी, उस दिन से उसने गाँव के बाहर पाँव नहीं धरा था। कभी रशीद कुछ कहता तो पूरो हँस कर कह देती "मैं न अपनी मर्जी से इस गाँव में आयी थी, न अपनी मर्जी से इस गाँव से जाऊँगी।"

जावेद अब दौड़ता फिरता था। रशीद वैसे ही शुरू से स्वभाव का नरम था, पूरो को वैसे ही वह बहुत प्यार करता था, पर जावेद पर उसका अपार स्नेह था। जावेद को चूमते प्यार करते वह अघाता नहीं था। जावेद अब कुछ कुछ तुतला कर बोलने लगा था। अब्बा-अब्बा कहता रशीद की टांगों से चिपट जाता था।

एक और पिंजर

पूरो चूल्हे को चिकनी मिट्टी से पोतती तो जावेद दौड़ा-दौड़ा आ कर गीली मिट्टी को थपकने लगता, पूरो के बने हुए चूल्हे को बिगाड़ जाता। पूरो लस्सी में नमक मिला कर पीने लगती तो जावेद हल्दी और मिरचें उसके लस्सी के कटोरे में डाल देता। जावेद किवाड़ों के पीछे छुप जाता, रशीद उसे ढूँढता रहता। जावेद की इन छोटी-छोटी क्रीड़ाओं से, उसकी हँसी से रशीद मकई के दाने की भाँति खिलता रहता।

एक दिन एक स्त्री "घुग्गू-घोड़े" लेकर गलियों में बेचती फिर रही थी। जावेद ने मिट्टी के छोटे-छोटे खिलौनों को और सरकंडे के झुनझुनो को देख लिया। लगा पूरो का पल्ला खींचने। पूरो ने मुट्ठी भर अनाज और पुराने कपड़े देकर घुग्गू-घोड़े ले लिये। वह अभी गली मे ही बैठी थी कि दूर से दौड़ती हुई एक पागल औरत गुजरी।

स्त्रियो ने दौड़ कर अपने बच्चे छिपा लिये, दरवाजे बन्द कर लिये, छोटे अनजान बालक चीखने-चिल्लाने लगे। पगली के शरीर पर पिंडलियों जितनी ऊँची एक सलवार थी, गले में कोई कपड़ा न था, उसका रंग शायद धूप से झुलस गया था, या फिर था ही काला। उसके सिर पर बालों की उलझी हुई धूल सनी लटें थी। जान पड़ता था मानो जब से वह जन्मी थी, कभी नहायी नहीं थी। अपनी टाँगों को वह अजीब तरह मरोड़ती थी, बाँहों को वह अजीब तरह फैलाती थी, चलते हुए भी दौड़ती हुई लगती थी। उसके मुख की ओर देखते ही उसकी डरावनी हँसी में बिखरे हुए दांतों की ओर दृष्टि जाती थी। उसके सूखे हुए, जले हुए, शरीर से उसकी आयु का कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता था। बस एक पिंजर था जो दौड़ता फिरता था।

पूरो देखती खड़ी रही। पगली दौड़ती हुई आई और खिलौने

बेचने वाली कुजड़िन के छाज मे से अपनी दोनों मुट्ठियाँ घुग्गू-घोड़ों' मे भर कर भाग गयी। उसकी डरावनी चीख़ती हुई-सी हंसी की आवाज़ देर तक गली में गूंजती रही।

पगली सारा-सारा दिन घूमती रहती, खेतों में फिरती रहती,क्यारियों में से भी कुछ तोड़ कर खा लेती। कभी-कभी स्त्रियां एक दो रोटियाँ बैठी हुई पगली के आगे डाल देती, वह उन्हें चबा जाती। कभी-कभी स्त्रियाँ कोई फटा पुराना कुरता उसे पहना देतीं, पगली खिलखिला कर हँसती। कुरता पहने रहती, फिर उसके बटन तोड़ डालती, फिर किसी दिन कुरते को दाँतो से फाड़ देती। फटी धज्जियाँ उसके गले में लटकी रहती। फिर पगली उन धज्जियों को भी खीच-खींच कर अपने शरीर से दूर कर देती। कभी-कभी अपने शरीर पर से सब कुछ उतार फेकती। स्त्रियाँ फिर कोई फटी-पुरानी सलवार, कोई फटा-पुराना कुरता उसे पहना देती।

पगली अब गाव सक्कड़आली मे जैसे रच-बस गयी थी, उसे प्रतिदिन देखने की सबको आदत-सी पड गयी थी। कभी-कभी गांव के छोटे-छोटे लड़के उसके पीछे लग जाते, तालिया बजाते, पगली को दौड़ाते, आप उसके पीछे-पीछे दौड़ते। फिर रास्ता चलता कोई सयाना आदमी उन्हे झिडक देता। लडके उसका पीछा छोड़ देते।

नन्हे बालकों ने हठ करना छोड दिया। माय उन्हे पगली का डरावा देती थी 'पगली पकड कर ले जायेगी'। रोते हुए बच्चे सहम कर चुप हो जाते थे।

पगली किसी पुआल के नीचे पड़ रहती। कभी कोई पानी का प्याला उसके पास धर जाता, कभी कोई रोटी के टुकड़े उसके सिरहाने रख देता। किसी दयालु ने एक फटी हुई रजाई एक पुआल के नीचे धर दी थी। पगली रात को नियम से वहां जाकर पड़ रहती थी।

पगली बस दौडती थी और हंसती थी। किसी के बच्चे को कभी कुछ भला-बुरा नहीं कहती थी, किसी की चीज-बस्त को कभी हाथ नहीं लगाती थी। जमीन पर गिरे हुए रोटी के टुकड़ों को उठा लेती, जमीन पर पड़ी हुई वही किसी खाने की चीज को चाट लेती थी।

कुछ ही दिनों मे सब ने देखा, और पूरो ने आश्चर्य चकित हो कर देखा कि पगली का नंगा पेट उभरता आ रहा है। सारे गाँव की स्त्रियां जैसे लाज के मारे गड़ रही हों। पगली न कुछ बोलती थी, न कुछ बताती थी।

पगली का शरीर दिन-दिन भरता जा रहा था।

गांव की स्त्रियों का जी करता था कि वह पगली के शरीर को ढक कर रखें, वह उसे किसी भुइहरे में डाल दे। पगली की समझ में कुछ न आता था। वह पहले की ही भाँति हंसती रहती थी वह वैसे ही दौड़ती रहती थी।

एक दिन कुछ आदमियों ने मिलकर पगली को गाँव के बाहर ले जाकर छोड़ दिया। अधेरा गहरा हो गया था। उस रात किसी ने पगली को नही देखा। सब सोचने लगे कि पगली अब इस गाव से गयी। आंख से दूर, दिल से दूर, अब वह किसी दूसरे गाँव चली जायेगी।

दूसरा दिन अभी आधा भी न बीता था कि पगली ठीक पहले की भांति गांव की गलियों में दौड़ रही थी, वह ठीक पहले की ही भाँति खेतों में हंस रही थी।

"वह कैसा पुरुष था, वह अवश्य ही कोई पशु होगा जिसने इस जैसी पागल स्त्री की यह दुर्दशा बना दी।" सब स्त्रियां त्राहि-त्राहि करती थीं। उनका जी पगली के ध्यान से मिचला उठता था।

"जिसके पास न सुन्दरता थी, न जवानी थी, मांस का एक शरीर जिसे अपनी सुध न थी, जो केवल हड्डियों का एक जीवित पिंजर···।"

पिंजर

एक पागल पिंजर था···चीलों ने उसे भी नोच-नोच कर खा लिया··· सोच-सोच कर पूरी थक जाती थी।

पगली का पेट दिन-दिन बढ़ता जा रहा था।

पिंजर में पिंजर

वही रात के पिछले पहर का अँधेरा था जिस में पूरो नियमपूर्वक खेतों को जाया करती थी। पूरो अभी बाहर वाली पगडंडी पर आयी ही थी कि एक पेड़ के तने के पास उसे एक मनुष्य की आकृति-सी गिरी दीख पड़ी। पूरो काँप उठी, पर वह ऐसे कच्चे जिगरे की औरत नहीं थी। धीरे से वह गिरे हुए शरीर की ओर बढ़ी। पूरो के लिए उसे पहचानना कठिन नहीं था। पगली एक पत्थर की मूर्ति की भाँति निश्चल उस पेड़ के नीचे पड़ी हुई थी, उसके पैरों के पास एक नवजात बच्चे का शरीर था जिसकी नाल अभी उसकी आँवल के साथ जुड़ी हुई थी।

पूरो एक लम्बा साँस खींचकर रह गयी। उस की आँखों के आगे अँधेरा आ गया। फिर जैसे उसे कुछ सुधि न रही।

पूरो की रीढ़ की हड्डी में एकाएक एक कम्पन दौड़ गया। वह

उलटे पाँव दौड़कर रशीद को बुला लायी।

पूरो ने एक फटी हुई चद्दर का टुकड़ा पगली के शरीर पर डाल दिया। फिर रशीद ने पगली की नाडी टोही। नाड़ी भी टोहने की आवश्यकता नही थी, पगली के मुख पर मौत की मुहर स्पष्ट लगी दीख पडती थी। बालो की एक लट उसके माथे पर जम गयी थी।

प्रकृति अपनी पूरी धड़कन के साथ पगली के बालक मे धड़क रही थी। बालक के मुँह में उसका अपना दाहिना अगूठा पड़ा हुआ था।

"या अल्लाह!" रशीद के मुख से निकला और चाकू से उसने बालक की नाल को काट दिया।

पूरो ने बालक को अपने सिर वाले पल्ले में लपेट लिया, और फिर दोनों जीव घर को लौट गये।

प्रातःकाल की धुन्ध की भाँति यह खबर सारे गाँव में फैल गयी। जो स्त्रियाँ आटा गूध रही थी उनके हाथों से परात छिटक गयी। जो रोटी बनाने जा रही थी वह बलते तनूर छोड-छोड कर पूरो के घर आती और बालक को देख-देख जाती थी।

रुई के गाले जैसे चिट्टे और निर्मल बालक को पूरो ने नहला-कर एक खटोली में लिटा रखा था। कुनकुने दूध में कपड़े का छोटा-सा टुकड़ा भिगो भिगो कर पूरो ने उस के होठों से लगाया, बालक पूरी चेतनता से दूध की बूंदें चूसने लगा। जावेद अपने घर आये छोटे-से पाहुने को झुक-झुक कर देखता था।

"रब तेरा भला करे!" "तेरे बच्चे जियें!" "बडा पुण्य किया है।"—गाँव की स्त्रियाँ आ आ कर कहती, अनाथ बालक पर दया करने के लिए शाबाशी देतीं और लौट जातीं।

दो चार आदमियों ने मिलकर पगली के शव को ठिकाने लगा दिया।

अंधेरा हो चला था। पूरो बच्चे के काम-काज में लगी हुई थी। रशीद ने लालटैन की बत्ती साफ करके उसे जलाया। बालक ने अपनी मोटी-मोटी चेतन आँखों से लालटैन की ओर देखा अभी उसकी कच्ची दृष्टि टिकती नहीं थी। फिर उसका ध्यान किसी दूसरी ओर हो गया।

पूरो विचारों में डूब गयी।

सोचने लगी कैसा था वह मर्द जिसने पगली के काले कलूटे कंकाल को हाथ लगाया। क्या ऐसा पगली की मर्जी से हुआ, या उसके साथ जोर जबरदस्ती की गयी। उस मर्द को कभी भूले से भी ध्यान न आया कि उसने पगली पर कितना भारी अत्याचार किया है। उस मर्द को कभी अपने बालक का भी ध्यान न आया जिसे उसने पगली के पास धरोहर के रूप में रखा था।

शायद पगली यह जानती ही न होगी कि उस के घर एक बालक का जन्म होगा। प्रसव की पीड़ा उसने कैसे सही होगी। उस पर किसी दाई को दया न आयी। रात के अंधेरे में वह चीखती रही होगी। खुली हवा के झोंके उसके शरीर में शूल मारते रहे होंगे। ठंडी भूमि पर पड़ी वह बिलखती रही होगी। परन्तु प्रकृति के कठोर नियम में बंधा उसका बालक दर्द पूरी होने पर अपने आप दुनिया में आया होगा, भूमि पर गिर पड़ा होगा, और पीड़ा से निचुड़ी हुई पगली की जीवन-डोर टूट गयी होगी!

फिर पूरो सोचने लगी। पगली को जो कर भी क्या लेना था। वह अपने बालक की क्या देख-रेख कर सकती थी। अच्छा हुआ उसकी जान छूट गयी। उसका बालक कितना सुन्दर है! टेढ़ी-मेढ़ी हड्डियों के झुलसे हुए पिंजर में कैसे इतना सुन्दर बालक पल गया। कैसी मोटी-मोटी आँखें हैं इसकी! सारे नक्शे सुन्दर हैं। पूरे मर्द का एक छोटा-सा रूप! न जाने इसका पिता अभागा कौन है!

सोचते-सोचते पूरो ऊँघ गयी। पूरो ने देखा एक दौड़ती घोड़ी पर डाल कर रशीद उसे भगाये ले जा रहा है। किसी बाग की एक छोटी-सी कोठड़ी में पूरे तीन दिन रखकर रशीद ने पूरो को घर से निकाल दिया है। पूरो पागल हो गयी है। वह गलियों में घूमने लगी है। उस के पेट में एक बच्चा सरसराने लगा है, और फिर·····फिर एक दिन एक पेड़ की छाया मे उसने एक बालक को जन्म दिया है, जिसकी शकल-सूरत बिलकुल जावेद की सी है। उस का बालक उसकी छाती से लगकर दूध के लिए रो रहा है, पर पूरो के दूध उतर नही रहा है·····

कांप कर पूरो जाग उठी। सामने खटोली में उसका नया बालक टिटिया कर रो रहा था। उस ने उसे उठाकर छाती से लगा लिया, फिर डरकर अपने जावेद के मुख की ओर देखा, वह अभी कुछ ही देर हुई पास वाली चारपाई पर सो गया था। फिर उस ने डरते-डरते बाहर चूल्हे के पास बैठे हुए रशीद की ओर देखा, रशीद अभी तक उसे छोड़ कर नहीं गया था और न ही उसने पूरो को अपने घर से निकाला था। वह अपने घर में सही-सलामत थी। रशीद उसका दयालु पति था, जावेद उसका घुंघराले बालों वाला सुन्दर पुत्र था। उसकी गली वाली कम्मो भी चोरी-छिपे उससे घुट-घुटकर बातें किया करती थी, पूरो के प्यार में हिस्सा बटाती थी। और अब पूरो का परिवार और बढ़ गया था। उसके घर में भगवान ने अपने आप एक पुत्र और भेज दिया था। उस ने झुक कर नये बालक का माथा चूम लिया।

फिर उस ने उठकर हथेली भर कर सफ़ेद जीरा खाया। जावेद ने पूरे दो बरस पूरो का दूध पिया था, और उसका दूध छुड़ाये उसे अभी बहुत दिन नहीं हुए थे। उस ने यह सुना हुआ था कि सफ़ेद जीरा खाने से औरत के दूध उतर आता है। पूरो ने छोटे बच्चे को अपने स्तन से लगा लिया।

तीन दिन के बाद सचमुच पूरो के दूध उतर आया। गाँव की स्त्रियाँ देख देखकर अचरज करती थीं। लड़का पूरो का छोटा पुत्र बनकर पलने लगा।

दावेदार

जुड़े हुए उपलों में जैसे धीरे-धीरे आग सिकती है, उसी प्रकार गाँव में खुसर-फुसर चल रही थी : "पगली हिंदू थी, उसके बच्चे को मुसलमानों ने ले लिया है, सारे गाँव के देखते-देखते उन्होंने हिन्दू बच्चे को मुसलमान बना लिया है·····"

जैसे बिल्ली अपने बच्चे को दुनिया की निगाहों से छुपाकर रखती है वैसे ही पूरो भी छोटे लड़के को कलेजे से लगाये मकान की भीतरी कोठड़ी में बैठी रहती थी। फिर भी बातें दीवारों को भेदकर उसके कानों में पड़ जाती थीं।

पहले तो एक-दो हिन्दू घरों में बैठकें होती रहीं।

"यह बात पक्की है कि पगली हिन्दू थी" कोई कहता।

"हमने अपने कानों से सुना है, वह लालामूसे के एक अच्छे घरानें की लड़की थी, अच्छी भली थी जब उसकी सौतन ने उसे मुर्दे की राख

खिला थी। बस तभी से वह पागल हो गयी।" कोई कहता।

"सुना है उसके घर वालों ने उसे दरवाजों में बन्द करके रक्खा, पर उसके भाग्य में तो खुआरी लिखी थी" कोई कहता।

"अजी, यह तो कोरी बातें हैं। मैंने खुद उसकी बायीं बाँह पर 'ओम्' खुदा हुआ देखा है" कोई धरती पर हाथ मार कर कहता।

"अंधेर है, यारो, हमारे देखते-देखते मुसलमान हमारी आँख में धूल झोंक गये।"

"धिक्कार है हम पर, हिन्दू बालक को उन्होंने मिनटों में मुसलमान बना लिया।"

"छोडो भी, यारो, न जाने वह लड़का किसकी बला है, किसको नहो, हम उस पिल्ले को कहाँ बाधते फिरेंगे" कोई जना बीच में यह भी कह देता।

"नालायक ! सवाल इस समय धरम का है। इस तरह तो कल वह सारा गांव मुसलमान बना लेंगे और तू उनका मुँह देखता रह जायेगा" एक दो व्यक्ति एक-साथ ऊँचे स्वर में बोल उठते।

कमरे की हवा ऐसी हो जाती मानो बन्द दरवाजों में वह घुट गयी हो!

"लड़के को हम वापस लायेंगे, देखते हैं कौन हमारा हाथ पकड़ता है।"

"असल में यही चार पैसों की ही बात है न ? महरी को चन्दा इकट्ठा कर के दे देंगे, वह लड़के को अपने आप पाल लेगी" कोई जोश के साथ अपनी जगह से जरा आगे सरक कर कहता।

"ऐसे गये बीते तो नहीं, सारा गाँव मिलकर क्या एक लड़के को न पाल सकेगा ?"

"कौन कह सकता है कि लड़का भी पगली की तरह गूँगा बहरा

निकलता है या·····" बीच में फिर कोई कह उठता।

"फिर क्या हुआ, बड़ा होकर धर्मशाला में झाड़ू लगा दिया करेगा, दो रोटियाँ ही खायेगा न।"

फिर वह एक दूसरे के साहस पर साधुवाद करते प्रसन्न होते।

"पहले महरी से तो पूछ लो" कोई कहता।

"लो, देखो! क्या वह न रक्खेगी? पहले चांदी की जूती उस के सिर पर रक्खेंगे, फिर उस से बात करेंगे।"

"अरे भई, लड़के का क्या है। धर्मशाला में तो ढोर-डगर का ही इतना काम है, मुफ्त में काम करने वाला मिल जायेगा।"

"अजी, अभी इसकी बिसात ही क्या है, लड़का पल तो जाय। पहले उसका·····"

"अरे, तुम लोग मरे क्यों जाते हो। धरम के नाम पर इतना भी नहीं कर सकते तो अंधे कुएँ में कूद मरो।"

"तुम्हारे खेत का पानी कोई अपने खेत में लगा ले तो तुम उसका सिर फाड़ देते हो, आज तुम्हारा हिंदुओं का लड़का वह उठाकर ले गये है तो तुम्हारे मुँह पर ताला पड़ गया है।"

कमरे की हवा ऐसी हो जाती, मानो उसमें पत्थर के कोयले का धुआं मिल गया हो।

अब जब रशीद अपने खेतों को जाता तो पास से गुजरते हुए हिन्दू उसकी ओर कड़वी आँखों से देखते। रशीद अपने ध्यान में मग्न चला जाता।

एक दो बार उसने बातों-बातों में पूरो से कहा कि भई, गांव की हवा अच्छी नहीं है, हमें इस झगड़े में पड़कर क्या लेना है, बात लम्बी हो जायेगी, वह लड़का ले जायें अगर उनकी यही मर्जी है, जो लड़के के भाग में होगा हो जायेगा।

दावेदार

पूरो कहती तो कुछ न थी, पर उसका मन व्याकुल हो उठता था। हड्डियों के एक छोटे से पिंजर को दिन रात कलेजे से लगाकर उसने छः महीने का किया था। अब वह भी जावेद भी भांति गोलमटोल निकलता आता था, उसकी आख अब पूरो को पहचानने लगी थी, जिधर-जिधर पूरो जाती उधर-उधर उसकी आखे घूमती थी, वह रशीद को देखकर बाहे फैलाने लगा था·····

फिर पूरो सोचती, पहले दिन ही हिन्दुओं को उसकी सुधि क्यों न आयी। वह उसे ले जाते, पाल लेते, उसे मां की सी गोद देते, उसे पिता का सा स्नेह देते। पूरे छः महीने पूरो ने रातें जाग कर काटी थी, जीरा फांक-फांक कर अपनी नसों में सै दूध उत्पन्न किया था, उसका मल धो-धो कर अपने नाखून घिसा लिये थे।

फिर पूरो को ध्यान आता था कि उसने लड़के को शहद चटाया था और अपने पड़ोस के मुसलमानों के घरों मे पंजीरी बांटी थी कि लड़के को बड़े होकर यह विचार न आये कि उसके जन्म पर किसी ने उसका कुछ न किया।

एक दिन गाँव के प्रमुख हिन्दुओं ने रशीद को बुला भेजा। पूरो के होठों पर पपड़ी जम गयी। पूरो सोच में पड़ गयी। बच्चे को पालने का बीड़ा तो उसने उठाया था पर वे लोग रशीद को बुरा-भला कहेंगे, रशीद का अपमान करेंगे,.....

पूरो कह रही थी कि वह भी रशीद के साथ जायेगी, वही उनके सवालों की जवाबदार थी, वह आप जाकर उनसे लड़के की भीख माँग लेगी...पर रशीद न माना, वह अकेले ही वहाँ चला गया जहाँ उन लोगों ने उसे बुलाया था।

गाँव के एक सम्मानित हिन्दू के मकान के आँगन में तीन चार-पाइयाँ पड़ी थी, जिन पर गाँव के कुछ प्रमुख हिन्दू बैठे हुए थे।

उन का विचार था कि रशीद दो-चार साथियों को लेकर आयेगा या शायद न भी आवे, तब वे उस से दूसरे ही ढंग से निबटेंगे। पर रशीद बिलकुल अकेला ही चला आया। सलाम-दुआ करके उनके सामने बैठ गया।

"क्यो भई, क्या सलाह है तेरी ? लड़का वापस देगा या नही ?" हुक्के की नली मुँह से निकालकर उनमें से एक ने अपनी भारी-भरकम आवाज मे कहा।

"मेरी क्या मजाल है। अल्लाह की देन है, मै कौन हूँ देनेवाला-लेनेवाला।" रशीद ने एक हाथ से अपने माथे को छूकर आकाश की ओर देखा।

"यह तो टालबाजी की बातें है, इन्हे छोड़ सीधी तरह बात कर" एक व्यक्ति ने क्रोधावेश में आकर कहा।

"मैंने तो अल्लाह के रहम पर उसे उठा लिया था। जो घड़ी-दो-घड़ी और वहाँ न पहुँचता तो क्या पता कोई कुत्ता बिल्ली ही उसे मुँह में धर लेता, पर अल्लाह के यहाँ से उसकी जिन्दगी थी..."

"ठीक है अगर भगवान के यहाँ से उसका धागा लम्बा है तो उसे कोई तोड़ नही सकता। पर एक बात तुझे मालूम होनी चाहिए कि उसकी माँ एक हिन्दू औरत थी, और तेरा एक हिन्दू बच्चे को उठा कर ले जाना हम सह नही सकते।"

"नही, मुझे नही मालूम कि वह हिन्दू थी कि कौन। वह हिन्दू घरों से भी खाना लेकर खाती थी, मुसलमान घरों से भी..." रशीद कह रहा था।

"पर वह तो बावली थी, तू तो बाबला नही" बीच में बात काट कर कोई बोल उठा।

"ठीक है, पर आप पहले दिन ही उस लड़के को ले लेते, पाल लेते,

मैंने कब इन्कार किया था। मुट्ठी भर वह पिंजर था। मेरी घरवाली ने जी-जान एक करके छः महीने काटे हैं। अब जब लड़का बच गया है तब आपको भी उसकी याद आयी है। अल्लाह का खौफ खाइये ! रब के नाम पर ही आप उसे पालेंगे, रब के नाम पर ही मैं उसे पाल रहा हूँ नहीं तो मुझे इससे और क्या हासिल है ·····" रशीद ने कुछ इस तरह कहा कि दो तीन व्यक्तियों के मुख पर यही भाव झलकने लगा कि भई, छोड़ो, जाने दो किस्से को, पालता है तो पाले, मुफ्त की बला गले मे डाल रखें।

"देख, हम बात को बढ़ाना नहीं चाहते। वह न हमारा कोई लगता है, न तेरा कोई लगता है। यह तो धरम का सवाल है, सो तुझे धरम की राह में नही आना चाहिए। झूठमूठ तू अपनी जान को संकट में डाल लेगा, किसी ने तेरे साथ कुछ बुरा-भला कर दिया तो हम जिम्मेदार नही होंगे। सो अपने आप सीधे रास्ते पर आ जा और लड़का वापस कर दे। और जो इतने दिन खिलाये-पिलाने के दो-चार रुपये लेना चाहता हो, वह भी ले ले" एक ने कहा।

"बेशक ! बेशक !" सब बोल उठे।

'अल्लाह····· अल्लाह·····" रशीद ने दोनों हाथ अपने कानों पर रख लिये।

"महरी खड़ी हुई है, हमारे साथ दो-तीन आदमी और चलते हैं और तेरे घर से लड़के को को ले आते हैं। उसे शद्ध हम अपने आप कर लेंगे।

"मैं एक बार आप सबसे विनती करता हूँ कि उस लड़के पर रहम करें और वह जहाँ है उसे वहीं रहने दें। मेरी घरवाली उसे अपने पेट के जाये की तरह पाल रही है" रशीद ने दोनों हाथ जोड़ कर कहा।

"हमने तुझे सीधा रास्ता बता दिया है। जो तू खैर चाहता है तो भला आदमी बन कर उठ चल। नहीं तो हम भी जानते हैं कि सीधी उंगली घी नहीं निकला करता।"—दो तीन आदमी चारपाइयों से उठ कर खड़े हो गये।

मकान के भीतर से महरो चादर ओढे हुए आ गयी। रशीद को खड़ा होना पड़ा। फिर सब रशीद के घर की ओर चल पड़े।

पूरो अपने मकान के दरवाजे पर खड़ी गली की आहट ले रही थी। जैसे ही उसने रशीद को सिर नीचा किये तीन-चार आदमियों के साथ आते हुए देखा, उसका कलेजा धक से हो गया।

पूरो की आंखों के आगे वह दिन फिर गया जिस दिन उसकी माँ उस से अलग हो गयी थी, जिस दिन उस का पिता उससे बिछुड़ गया था, जिस दिन उस के भाई-बहन उससे छुट गये थे यह लड़का उसका आत्मीय बन चुका था, इस से बिछुड़ने में भी उतनी ही पीड़ा थी।

पूरो ने दौड़ कर उस लड़के को अपनी छाती से चिपटा लिया। रशीद अपने मकान के आगन में आकर ऐसे खड़ा हो गया मानो उसे अपनी कोई सुध-बुध न हो।

न रशीद को कुछ कहने की आवश्यकता थी, न पूरो को कुछ पूछने की।

महरी भी एक पल को ठिठक गयी। पूरो की छाती से बालक को हटा लेना उसे बहुत कठिन लगा।

"जल्दी कर, देर हो रही है, फिर हमें भी तो काम लगना है" रशीद के साथ आये हुए आदमियों ने तीखे हो कर कहा।

महरी ने दोनों हाथ बढ़ा कर पूरो के हाथो में से बालक को ले लिया। लड़के की मुट्ठी में पूरो का पल्ला आ गया, पूरो को लगा मानो वह लड़का अपनी मुट्ठी में भर कर उस का दिल भी लिये जा

रहा हो। पूरो का पल्ला साथ खिचता गया।

महरी ने लड़के की मुट्ठी खोल कर पल्ला छुड़ा दिया। लड़का चिल्ला कर रोने लगा, शायद अमजाने हाथों के स्पर्श के कारण।

पूरो टूटी हुई टहनी की भाति दीवार का सहारा लेकर बैठ गयो। गली के मोड़ से बच्चे के रोने को आवाज आ रही थी।

अधेरा पड़ने तक पूरो के स्तनो से दूध की धारें निकलने से उसकी कमीज गीली हो गयी थो। पूरो कहती थी, लड़का जरूर भूख से बिलख रहा होगा, तभी तो उसकी छातियों से दूध की धारे बह रही थी।

रात को पूरो के यहा न किसो ने कुछ पकाया न किसी ने कुछ खाया।

जब जावेद सहज स्वभाव पूछता से "अब्बा! हमारे काके को कहाँ ले गये है?" या "अब्बा! हमारा काका कब आयगा?" तब पूरो और रशीद निरुत्तर-से जावेद की ओर देख कर रह जाते, लज्जित-से सिर झुका कर चुप हो जाते।

पूरो की आंखों के आगे कम्मो का मुख फिर जाता, उसकी आखों के आगे रह-रह कर लड़के का मुख आता। पूरो सोचने लगी वह टूटे हुए फूलों को क्यों अपने गले से लगा कर रखती है, टूटी हुई कलियों पर पानी छिड़क-छिड़क कर उन्हें क्यों हरा करती है। सभी पराये थे। उस का अपना कोई न बन सकता था। रशीदे का मुख उसे अच्छा लगने लगा, एक रशीदे ने ही उसका साथ निबाहा था, यद्यपि सबसे सम्बन्ध छुड़वाने वाला भी वही था, फिर भी वह उसका अपना था, उसके जवेद का पिता था।

तीन दिन बीत गये। चौथे दिन सारे गाँव में एक ही चर्चा चल रही थी, "लड़का नही बचेगा, लड़का तो मरने को पड़ा है, लड़के का बुरा हाल है, बस दो घडी का मेहमान है, जो दूध की घूंट

उसके अंदर जाती है वैसी की वैसी ही बाहर निकल जाती है।"

पूरो दीवारो से लग-लगकर रोती थी। उसके स्तन दूध इकट्ठा हो जाने के कारण अकड़ने लगे थे और उधर वह बच्चा था कि दूध न मिलने के कारण उसका मुँह सूख गया था। लडके के मुँह और स्तन के दूध के बीच बड़ी दूरी पड़ गयी थी।

"लड़के का दूध छुड़ा दिया है, लड़के की आह पड़ जायेगी।"

"अगर लड़का मर गया तो गाँव भर पर साड़साती आ जायेगी।"

"मैं तो अपने आदमी से कहती हूँ कि भले आदमी बनो और जहाँ से लड़का लाये हो वही छोड़ आओ।"

"हम तो आप बाल-बच्चेदार हैं, किसी की आह अच्छी नही होती!"

"मेरा मरद ही आप मनमानी करता है, मै तो पहले ही मना कर रही थी कि परायी आग मे कूद कर तुम क्या लोगे।"

"कहते है कल रात महरी ने लड़के को ठंडा दूध पिला दिया। बस तब से ही लड़का कुछ का कुछ हो गया।"

"भला भैंस का दूध इतने छोटे बालक को पच सकता है, लड़के को उल्टियाँ आने लगी।"

"नही, जी, नहीं, लड़का हुड़क उठा है, जब से हुआ उसी का मुँह देखता रहा, अब और किसी से परचे तो कैसे परचे।"

"बिचारा बेजबान है!"

गाँव की हिन्दू स्त्रियों के मुँह पर यही बातें थी। पूरो आहट लेती थी, चौक-चौंक पडती थी, उसका जी करता था कि वह दौड़ी-दौड़ी धर्मशाला चली जाय, उन लोगों से विनती करे कि इस तरह किसी जीव को न मारो, लड़के को मेरी झोली में डाल दो, वह ठीक हो जायेगा।

पर पूरो को साहस न होता था, उसके पैर न उठते थे। पूरो को आशा नहीं थी कि मज़हब के पत्थर जैसे कान उसकी बिनती सुन लेंगे।

उसके अगले दिन भी कोई बात न हुई।

फिर अचानक ही रशीदे-हर के मकान के आंगन में दो-तीन आदमी आकर खड़े हो गये।

"यह लो, इसकी जान तुम्हारे हवाले करते हैं, बच सके तो बचा लो" और उन्होंने एक सफ़ेद कपडे में लिपटे हुए पीले, प्रायः निर्जीव बालक को रशीदे के हाथों में थमा दिया।

एक बार तो रशीद के मन में आयी कि वह कस-कर एक थप्पड़ उन के मुँह पर मारे "मेरी छः महीने की सेवा के लिए तुम मुझे चार ठीकरे देते थे, अब उसके पैर कब्र में लटका कर मेरे हवाले करने आये हो! जाओ, जहा मर्जी आये ले जाओ।"

पूरो का उल्लसित मुख देखकर रशीदा सब कुछ पी गया।

एक सप्ताह के भीतर ही सारे गाँव ने देखा कि लड़का पूरो के आँगन में अच्छा-भला खेल रहा था।

रत्तोवाल

रहीमे की बुढ़िया मां की आंखें दिन-दिन खराब होती जा रही थीं। रहीमे की एक पत्नी सात महीने की अबोध बालिका को छोड़कर मर गयी थी, दूसरी पत्नी की अपनी सास से कम बनती थी। रहीमे की माँ अपनी आंखों को और भी रोती थी। अभी तक वह चौके के दस काम करके चलती थी, रुई कात-कात कर उसने दरियों से ट्रंक भर लिये थे, महीन सूत कात-कात कर उसने दुतहियों और चौतहियों से घर भर दिया था, अभी तक वह अपने बुडढ़े हाथों से अनाज फटक लेती थी, आटा पीस लेती थी, कपास बेल लेती थी, सुबह के समय मथानी लेकर दही बिलोने बैठ जाती थी। फिर भी उसकी बहू बुराइयां निकालती रहती थी। बुढ़िया सोचती थी कि जो वह आंखों से मोह-ताज हो गयी तो उसे कोई मिट्टी के ठीकरे में भी पानी न देगा।

रहीमे की मां को यही चिन्ता दिन रात सताती थी। एक दिन

उसने पूरो से बिनती करते हुए कहा कि जो वह कोई पन्द्रह दिन के लिए उसके साथ चली चले तो वह अपनी आंखों का इलाज करा कर देख ले, कौन जाने उसकी सुनवायी हो जाय।

"अम्मा ! वह सयाना कहा रहता है ?" पूरो ने पूछा।

"सयाना नहीं है, बेटा ! एक बावली है, उसे पीरों का वरदान है। कहते है कि उसके पानी से रोज सवेरे नमाज पढ़कर आंखें धोने से कुछ ही दिनों में आंखें भली-चंगी हो जाती है। सुना है कि कइयों की बन्द आंखें भी वहां जाकर खुल गयीं। बावली की मिट्टी भी आंखों को लगाते हैं।"

"अम्मा ! वह बावली है कहा ?"

"रत्तोवाल गांव में है। एक साईं वहां रहता है, आये-गये मरीजों के लिए उसने वहां बावली के पास तम्बू लगवाये हुए है।"

पूरो के कानों में मानो किसी ने सलाख भोंक दी। रत्तोवाल... रत्तोवाल .....छतोआनी के खेतों में खड़े होकर जिस रत्तोवाल को जाती हुई कच्चो सड़क को पूरो चाव से देखा करती थी, जिस सड़क पर से कोई पूरो को लेने के लिए घोड़ी पर चढ कर आने वाला था, जिस सड़क पर से गांव के चार कहार पूरो की डोली ले जाने वाले थे।.....रत्तोवाल.....रत्तोवाल.....

पूरो के पाँवों से वह पथ मैला न हुआ था, पूरो की आँखों ने वह गाँव देखा न था। पूरो को एक भूला हुआ नाम स्मरण हो आया..... रामचन्द.....रामचन्द.....

पूरो के भीतर से एक धुँआ-सा उठा, उसके मन में उलाहने उठने लगे 'एक बार उसका मुख तो देख लूँ कैसा है, एक बार उसका गाँव तो देख लूँ कैसा है....."

"अच्छा, अम्मा ! मैं तुम्हारे साथ चलूँगी" पूरो के मुख से

अनायास ही निकल गया। फिर लज्जित-सी होकर पूरो उसके मुख की ओर देखने लगी। पूरो को लगा मानो रहीम की माँ ने उसके हृदय की बात जान ली हो।

'माई, तेरे बच्चे जिये, तू दूधो नहाये पूतो फले" रहीमे की मा के हृदय से आशीर्वाद निकलने लगे। कौन जाने उसके मन मे यह कामना उत्पन्न हुई, क्या ही अच्छा होता जो मेरी बहू भी ऐसे ही मीठा बोल सकती!

"अम्मा! जावेद के अब्बा को तुम मना लेना, मैं नहीं कहूंगी" पूरो ने लजाते हुए कहा।

'ले देख! वह तो मेरा बेटा है, कभी इंकार कर सकता है? मेरी खातिर चार दिन दुख सुख मे काट लेगा।" रहीमे की माँ ने बडा अपनापा दर्शाते हुए कहा।

पूरो भली भाँति जानती थी कि रशीदा उसकी बात को कभी नही टालना, पर रशीदे के सामने रत्तोवाल का नाम लेना ही बस कठिन था।

उस रात पूरो के मन मे परस्पर विरोधी विचार उत्पन्न होते रहे। "वह मेरा कौन लगता है? मैं तो उसकी ओर आँख उठा कर भी नही देखूँगी। पराया मर्द, मुझे उसके गाँव से क्या लेना ....." "वह गाँव में रहता है तो रहा करे, अम्मा अपना इलाज करायेगी, फिर हम लौट आयेंगे।,.....तेरा ही मन उसके लिए उमग रहा है, उसको तो बुरे सपने की भांति कभी तेरा ध्यान भी न आया होगा..."

पूरो सोचती, उस गाँव में जाकर रात पड़ते ही उस के भीतर जैसे कोई सोई हुई कब्रों को खोदेगा! उसके भीतर जैसे कोई गड़े मुर्दों को उठायेगा! इन कफनों को उतारने से क्या लाभ? वह रत्तोवाल नहीं जायेगी! वह रत्तोवाल के रास्ते से ही न गुजरेगी।

पूरो हाँ या ना कुछ न कहती थी।

जावेद अपने पिता को न छोडता था। रशीद ने उसे साथ न भेजा दोनों स्त्रियों को पहुँचाने के लिए रहीमे-हर के यहाँ का एक पुराना काम करने वाला अशरफ साथ गया। पूरो छोटे लड़के को साथ ले गयी।

अशरफ अगले फट्टे पर इक्के वाले के साथ बैठ गया। सारा सामान पीछे रख कर पूरो और अम्मा आमने-सामने फट्टों पर बैठ गयी। इक्के के पहले हिचकोलों से ही पूरो का लड़का उस की गोदी में सो गया। आगे बैठे हुए अशरफ पूरो के लड़के को उठा लिया। इक्का रत्तोवाल की सड़क पर चला जा रहा था।

घोडे की टापों की आवाज जैसे पूरो के सिर पर हथौडा चला रही थी। पूरो ने अपना माथा इक्के की बाँह से लगा लिया। वह ऊँघ गयी। .....सजी हुई डोली मे चादी के झब्बे वाला एक गाव-तकिया सिर के नीचे रखे हुए पूरो लेटी हुई थी। चूडे के बोझ से उसकी बाहे कठिनाई से उठती थी। हवा के एक झोंके से डोली का परदा जरा सरक गया। उस मद्धिम से प्रकाश में उसने देखा, पूरो के हाथों पर मेहदी खूब खिली हुई थी। कितनी खारी मेंहदी थी, पूरो की सहेलियों ने कितनी सारी थोप दी थी। यह कहार कितने बुरे है, न जाने कैसे चलते है। डोली मे बैठे-बैठे पूरो की कमर दुखने लगी थी, डोली में हिचकाले भी कैसे आते है पूरो के गुदे हुए सिर से उसका पल्ला सरक गया, पूरो ने हाथ उठाकर पल्ला ठीक किया,हाथ में पहने हुए आभूषणों की छन-छन सारी डोलीमें गूंज उठी। पूरो का जी बैठा जा रहा था, कल से उस से कुछ खाया नहीं गया था। पूरो की मां ने मठड़ियों की एक डलिया उसकी झोली में डाल दी था, पूरो का मन किया कि मठड़ी का एक टुकड़ा मुंह में डाल ले, उसका जी ठिकाने नही आ रहा था.....

अम्मा पूरो का कन्धा पकड कर हिला रही थी "ठीक दुपहरी सिर

पर आ गयी, एक-दो कौर तो मुंह में डाल ले।"

इक्के वाले ने इक्का खड़ा किया हुआ था। रास्ते में एक छोटे-से गांव के पास खाने-पीने के लिए वे लोग रुके थे, पूरो कांप कर जाग उठी, न कोई डोली थी, न आभूषण थे, न मेंहदी थी। न चूड़ा था। पूरो इक्के के पिछले फट्टे पर अम्मा के सामने बैठी हुई थी।

पूरो ने रास्ते के लिये घी का हाथ लगा कर पराँठे बना कर रख लिये थे। अम्मा ने वही गठड़ी खोली। अशरफ को चार पराँठे दिये, इक्के वाले को दिये, आप लिये. पूरो के आगे धर दिये।

पूरो के गले से कौर नही उतरता था। पराठे के घी से पूरो को मिचलाहट-सी आती थी।

"थोडा ही रास्ता रह गया है, जल्दी से निबटा लें। रात को घोड़ी को साँस दिला कर मुझे सवेरे ही लौटना है।" इक्के वाला कह रहा था। फिर सब सवारियाँ वैसे ही इक्के में बैठ गयी। पूरो ने अपना माथा इक्के की बाँह से लगा लिया। पूरो ने रात भर जाग कर आने का सब सामान असबाब बाँधा था, उसे रात भर का उनींदा था।

·····डोली फिर हिचकोले खाने लगी। रत्तोवाल का रास्ता खत्म होने में न आता था। एकाएक तेज़ बाजों और शहनाइयों की आवाज बहुत ऊँची हो गयी। डोले के इधर-उधर बाजे बज रहे थे। पूरो ने समझा रत्तोवाल आ गया है।·····बाजे और जोर से बजने लगे·····लड़कियाँ गीत गा रही थीं···एक स्त्री ने उसका घूघट उठाया·····फिर किसी ने एक छोटा-सा बालक उसकी गोदी में डाल दिया, बालक अपरिचित गोदी में आकर रोने लगा, स्त्रियां खिलखिला कर हंस रही थीं, वह बालक का शगुन कर रही थीं·····

अम्मा उसके कन्धे को हिला रही थी "आज तुझे बड़ी नींद आ रही है। देख लड़का रो रहा है।"

पूरो फिर कपकपी लेकर जागी। इक्के के पिछले फट्टे पर बैठी हुई अम्मा उससे बात कर रही थी।

"हमारे पास से इतनी भारी बरात गुजरी है, मार बाजे ही बाजे बज रहे थे, आप की आँख नहीं खुली ?" अशरफ कह रहा था।

'तुझे सोनी को उसने लड़का पकड़ाया, वह भी तू ने पकड लिया, फिर भी तेरी नीद नही टूटी·····" कहते कहते अम्मा हंसने लगी।

इक्का रत्तोवाल के निकट पहुँच गया था। जब बावली के पास जा कर सब लोग इक्के से उतरे तो सामने ही सायीं का घर दिखायी दिया। तबुओ की जगह अब सायी ने दो तीन कच्ची कोठड़ियाँ बनवा दी थी जिनमे दूर-पार के आये हुये मुसाफिर रहते थे,बावली की मिट्टी, बावल. का पानी आँखों को लगाते थे, मनोकामना पाते थे।

सायी ने इन नये मुसाफिरों को एक कोठड़ी दिलवा दी। अशरफ ने सब सामान गठड़ी पोटली कोठड़ी में रखा और अम्मा को ले कर सायी के पास चला गया। पूरो ने कोठड़ी मे पड़ी हुई चारपाई पर खेस बिछा कर लडके को लिटा दिया। फिर वह दरवाजे पर खडी हो कर सामने खेतों के पार गाँव के घरों की ओर देखने लगी।

·····मैं रत्तोवाल आ गयी, मुझे किसी ने बुलाया नही, मुझे एक भी आत्मो लेने न आया, किसी ने भी शहनाई न बजायी, किसी ने भी गाना न गाया, किसी ने भी मेरे हाथों में चूड़ी न पहनायी, एक भी कौड़ी मेरे हाथों में न छनकी, मेंहदी की एक पत्ती भी मेरे हाथों पर न लगी···

गाँव के बाहर इस बावली पर बड़ा सन्नाटा था। पूरो का जी उड़ा जाता था। उसका मन करता था कि वह दौड़ कर उस गाँव में चला जाय, यहाँ से भाग जाय। रह-रह कर पूरा के मन में विचार

उठता, कैसे लोग हैं इस गाँव के, कोई उससे नहीं कहता "बैठ जाओ", कोई उससे नहीं कहता "जीती रहो!" कोई उससे नही कहता···

फिर पूरो कुछ संभली। पूरो को लगा वह कुछ पागल होती जा रही है। कहीं वह पागलों की भांति गाँव की गलियों में न दौड़ने लगे, कहीं वह अपने कपड़े न फाड़ डाले, कहीं वह चिल्ला-चिल्ला कर बोलने न लगे·····

सायीं ने अम्मा को बताया कि उन्हें वहाँ पूरे तेरह दिन रहना पड़ेगा। उनका नौकर अगले दिन वापस अपने गाँव सक्कड़आली चला गया। आटा दाल वह अपने साथ ले आयी थी। पूरो और अम्मा अपनी रोटी आप पकाती थी। वैसे यदि कोई चाहे तो सायी की दरगाह से भी भोजन पा सकता था।

पूरो ने गाँव की ओर मुख न किया। फिर गांव के बारे में पूरो किस से पूछती और क्या पूछती। दिन पर दिन बीतते जा रहे थे। गाँव में वह जाती भी तो किस बहाने? यदि किसी चीज की आवश्यकता होती थी तो सायी के नौकर-चाकर वहीं ला देते थे। यह सोच कर पूरो का दिल व्याकुल हो उठता था कि वह गाँव की दहलीज तक आकर लौट जावेगी पर गाँव न देख सकेगी। पूरो के मन में आता था कि किसी न किसी तरह से वह जाकर सारा गाँव देख आवे, उसका घर भी देख आवे, उसे भी देख आवे, पर उसे कोई न जान सके·····फिर पूरो सोचती, पूरो को कैसे मालूम होगा कि उसका घर कौन सा है, वह किसी से पूछें भी तो कैसे, फिर घर को भीतर से कैसे देखेंगी·····फिर पूरो सोचती उसके घर को देख कर भी क्या लेना है, उसका उस घर से सम्बन्ध ही क्या है, क्यों उसके मन में ऐसी बातें उठती हैं·····

पूरो का जी ठिकाने न आता था। एक के बाद एक कर के

दिन बीतते जाते थे। बैठे-बैठे पूरो को एक भला हुआ गाना याद आ गया :

जये आये तये टुर चल्ले
साडे आयाँ दा कदर नयीं
हाय रब्बा, साडे आयाँ दा सबर पयी।

कितनी ही बार पूरो की आँखो में आँसू भर-भर आते, वह उन्हें पी जाती। लड़के को अम्मा के पास लिटा कर वह खेतों में घूम आती।

पूरो सोचती, एक बार देखूँ तो पहचान तो लूं।

फिर पूरो सोचती, इतने बरस हो गये है, कौन जाने कैसी सूरत हो गयी हो, अगर मेरे पास से भी गुज़र जाय तो मै क्या पहचान सकूँगी।"

खेतों में किसानों से कभी-कभी पूरो पूछ लेती "भाई! ये खेत किसके है, दो गाजरे लेनी थी, हम तो मुसाफिर है।" किसान कभी किसी का नाम लेते, कभी किसी का, रामचन्द का नाम कोई न लेता।

अगले दिन किसी ने सचमुच रामचन्द का नाम ले लिया, पूरो के पाँव ऐसे हो गये मानो धरती में गड़ गये हों!"·····

पूरो का सिर चकराने लगा, उसे लगा, वह उसी मिट्टी पर गिर पड़ेगी, वह उसी मिट्टी पर मिट्टी हो जायेगा·····

पूरो उसी कीकर के नीचे ख़ड़ी की ख़ड़ी रह गयी। उसके पैरों म से जैसे किसी ने शक्ति खीच ली हो! उसके पैर जैसे जम कर बरफ के ढेले बन गये हों! उस मिट्टी ने जैसे पूरो को कस कर अपनी लपेट में ले लिया हो!·····

पूरो को जान पड़ा, वह खड़ी की खड़ी अनार का पेड़ बन कर उग

आयी थी, जिसके लाल अनारो को जब भी कोई तोड़ने लगता वह अगारे बन कर धरती पर गिर पड़ते, उसके लाल अनारों को जब भी रामचन्द तोड़ता अनार के लाल दाने लहू की बूंदें बन कर उसके कुरते पर गिर पड़ते और उसे अनार के पेड में से एक आवाज सुनायी देती :

मैं बूटा उग्गी होई आँ
मैं बे मुरादी मोयी हाँ

किसान ने काटे हुए चनों का गठ्ठड़ बना कर सिर पर धर लिया। पूरो का ध्यान टूटा। उसे याद आया कि जो राजकुमारी अनार का पौधा बन कर उगी थी उसकी कहानी उसने छोटे होते सुनी थी। पूरो अभी तक न राजकुमारी बनी थी, न अनार का पौधा !

"मालिक आ रहा है·····" कहते हुए किसान चने का गठ्ठड़ लेकर कुएँ की ओर चल दिया।

पूरो की आँखों से आँसू बहने लगे। रामचन्द जब पूरो के पास से गुज़रा, उसकी आँखें पूरो की ओर उठी, पूरो का मुंह आँसुओं से भीगा हुआ था।

पूरो को न कीकर की ओट होना याद रहा न अपने पल्ले से आँसू पोंछ लेना। शायद आँसुओं के बहने के कारण उसे रामचन्द का मुंह भी दिखायी नहीं दे रहा था।

"तुम कौन हो, बीबी ? तुम्हें क्या हुआ है ?" रामचन्द के पैर रुक गये।

पूरो कुछ न बोल सकी।

"तुम्हें कोई तकलीफ़ है, बीबी ?" पूरो के कानों में फिर रामचन्द की आवाज़ आयी। पूरो की जीभ जैसे किसी ने पीछे खींच ली थी, वह मूर्ति की भाँति खड़ी रही। पूरो के मन में बाढ़-सी उठी पर उसके मुंह

से एक शब्द भी न निकला।

रामचन्द ठिठक गया। उसने इधर-उधर देखा। शायद वह किसी किसान को सहायता के लिए बुलाता। उसी समय पूरो के पैरों में शक्ति लौट आयी और वह चुप को चुप, गुम-सुम, खेतों से बाहर चली गयी।

पूरो चुपचाप आ कर अपनी कोठड़ी में पड़ रही। उसी शाम सक्कड़आली से अशरफ आ गया था। अगले दिन तड़के ही उन सब को अपने गाँव लौटना था।

उस रात पूरो की आँख न लगी। "एक शब्द भी मैंने उससे न कहा·····पूछता था, तुम कौन हो, बीबी ?·····मैं उसे क्या बताती मैं कौन हूँ !·····मेरी व्यथा को बोलकर कौन बता सकता है !····· कभी सोते उठते बैठते उसे मेरे रोते हुए मुख का ध्यान आयेगा तो वह सोचेगा कि वह कौन थी·····फिर कौन जाने उसे कोई बिसरी हुई कहानी याद आ जाय···· ·····उसकी मरी हुयी पूरो उसे याद आ जाय·····फिर शायद उसकी आँखों से दो-एक आँसू गिर पड़े···।" फिर पूरो सोचती "यदि मैं भी उस राजकुमारी की भाँति अनार का पौधा बन सकती, उसके खेतों में उग आती, वह मेरे अनारों को तोड़ता, फिर मैं अनारों में से बोलती·····न जाने यह सब किस युग की बातें है·····आजकल तो कोई मनुष्य पौधा नही बनता····· "

रात का पिछला पहर अभी भोर नही बना था कि जैसे किसी ने पूरो का हाथ पकड़ कर उसे चारपाई से उठा दिया। पूरो बाहर खेतों को चली गयी। रात के अंधेरे में भी पूरो ने उस जगह को पहचान लिया, उस कीकर को पहचान लिया, जहाँ कल साँझ को रामचन्द उसके सामने खड़ा था। झुक कर पूरो ने उसी स्थान पर से उसके चरणों की धूल उठा ली और अपनी आँख बन्द करके एक चुटकी अपनी

आंखों से लगा ली।

आँखों से लगे हुये पूरो के दोनों हाथ किसी ने अपने हाथों में ले लिये। पूरो ने चौंक कर देखा, रामचन्द उसके सामने खड़ा हुआ था।

"क्या तू पूरो है ?" रामचन्द पूछ रहा था। "सारी रात यही एक नाम मेरे दिमाग में चक्कर लगाता रहा, सच सच बता तेरा नाम पूरो है ?"

पूरो का हृदय कहता था वह रामचन्द के पैरों पर गिर पड़े, वह जी भर कर रोवे और कहे कि वह पूरो है, चीख़ चीख़ कर बताये कि वह पूरो है, वह उसी की पूरो है जिसे लेने उसने घोड़ी पर चढ कर जाना था। जिस के साथ उसकी भाँवरें पड़नी थी, वह वही पूरो है जिसे उसके घर डोली चढ़ कर आना था·····वह पूरो है, पूरो ·····

पूरो की जीभ को आज भी किसी ने खींच लिया। पूरो एक भी शब्द न बोल सकी। रामचन्द के हाथों में से उसने अपने हाथ वापस ले छुड़ा लिये। पूरो वैसे की वैसी, गुम-सुम, वहाँ से लौट चली।

"जो तू पूरो है तो मुझे एक बार बता जा" रामचन्द ने पूरो के पीछे तेज़ कदम बढ़ाते हुए कहा। "मैं सारी रात इन खेतों में घूमता रहा हूँ, पता नही क्यो, मेरा दिल गवाही देता था तू फिर आयेगी, मेरा दिल गवाही देता है तू पूरो है।"

"पूरो तो कब की मर चुकी है।" न जाने कैसे पूरो के मुँह से निकल गया। उसने पीछे मुड़कर भी न देखा, वह आगे बढ़ती गयी।

अम्मा ने बावली के साथी को मिठाई का चढ़ावा चढ़ाया। अम्मा और उसके बाकी साथियों से लदा हुआ इक्का धूप चढ़ने से पहले सक्कड़-आली की सड़क पर पड़ गया।

एक आग

एक-एक करके कई दिन बीत गये, दिन-दिन कर के महीने, और महीना-महीना करके कई बरस बीत गये।

दूध की भरी हुई काढ़नी को जब पूरो चूल्हे पर कढ़ने के लिए रखते समय सूखे कंडे जोड़ती, और सारा दिन जलने के लिए कंडों में धीमी-धीमी आग सुलग जाती, तब पूरो को लगता कि उसकी छाती की भीतर वाली तह में कोयले की एक चिनगारी पड़ी हुई है जिससे न जाने कितने दिनों से उसके अन्तस्तल में कुछ आग-सी सुलग रही है।

कभी पूरो सोचती कि आजकल उसका खाया पिया उसकी छाती पर ही धरा रहता है, उसे अपने गले में कुछ अड़ा हुआ मालूम होता। दो तीन बार बासी पानी के साथ उसने चुटकी भर-भर कर अजवायन भी फाँकी थी। कभी पूरो सोचती, मेरे अन्दर गरमी हो गयी है, उसने तीन चार दिन कच्ची लस्सी के कटोरे भर-भर कर पिये। कभी पूरी

सोचती थी, कौन जाने माँ का जी कैसा हो। पता नहीं क्यों उसके मन में ऐसे विचार उठते थे।

इन्हीं दिनों एक दिन जब रशीद घर आया उसका मुँह इतना उतरा हुआ था मानो वह महीनों का रोगी हो।

रशीद ने घर में कुछ न कहा। पूरो से बातें करता रहा, जावेद से मदरसे की बातें करता रहा, छोटे लड़के के साथ हँसता-खेलता रहा। खाना खाते समय पूरो रशीद के मुख को देखती रही। उसे लगा मानो कौर रशीद के गले से नीचे नहीं उतर रहा है। पानी के घूँट के साथ रशीद ने कुछ कौर नीचे उतार लिये। रशीद के मन की दशा पूरो से छिपी न रह सकी।

पास-पास पड़ी हुई चारपाइयों पर लेटने के बाद पूरो ने रशीद के जी का हाल पूछा।

"आज मेरे गाँव से एक आदमी आया था, हमारे अपने खेतों पर काम करता है" रशीद ने एक पल चुप रह कर कहा।

"छतोआनी से ?"

"हाँ।"

"फिर ?"

"वह कह रहा था कि हमारी कटी हुई फ़सल के ढेर लगे हुए थे, मनों अनाज ढेरों का ढेर पड़ा हुआ था....."

"फिर ?"

"किसी ने रातों रात आग लगा दी।"

"हैं !"

"सारी फ़सल में से एक दाना भी नहीं बचा।"

"किसी ने जान-बूझ कर लगायी ?"

"शक तो ऐसा ही है।"

"ऐसा कौन था ?....."

"वह आदमी कह रहा था आग की लपटों से सारा आसमान लाल हो गया था।"

"फिर अब, हमारा जो हिस्सा था सो तो था ही, वे बिचारे क्या करेंगे ?" उन बिचारों से पूरो का अभिप्राय रशीद के भाई, उसके चाचा ताउओं से था जिनका फ़सल में साझा था।

रशीद चुप हो गया। पूरो भी जैसे सोच में पड़ गयी। बालक तो सो गये थे, पर रशीद और पूरो की आँखों में नींद नही थी।

"पर दूसरे का घर फूँक कर किसी को क्या मिला ?" पूरो ने कई बार रह-रह कर अपने मन में सोचा। रशीद चुप रहा। पूरो देखती रही, कभी रशीद दायीं करवट लेता है, कभी बायी करवट लेता है, फिर सीधा लेट जाता है। कभी-कभी वह अपनी आँखें मीच कर भी लेट रहा, पर नीद उसके पास न फटकती थी। कई बार उठकर रशीद ने पानी भी पिया।

"लड़के को अलग चारपाई पर लिटा दे, मुझे आज इसके पास नीद नहीं आती" रशीद ने कहा।

जावेद सदा अब्बा के पास सोता था और छोटे लड़के को पूरो अपने पास सुलाती थी। पहले कभी रशीद ने यह बात न कही थी। पूरो को आश्चर्य तो हुआ पर उसने चुपचाप जावेद को उठा कर अलग चारपाई पर लिटा दिया।

फिर भी कितना ही समय बीत गया। रशीद करवटें ही बदलता रहा, पर नीद उसकी आँखों के पास न आयी।

"एक उड़ती-उड़ती बात सुनी है, पता नहीं सच है या झठ" रशीद ने लेटे-लेटे कहा।

"क्या ?" पूरो ने चौंक कर पूछा।

रशीद फिर चुप हो गया, मानो वह अपने मन में निर्णय कर रहा हो कि वह बात पूरो को बतानी चाहिए या नहीं।

रशीद बड़ी देर तक चुप रहा। पूरो अपनी चारपाई से उठ कर रशीद की चारपाई पर जा बैठी।

"सुना है कि गाँव में एक अपरिचित जवान आया था। वह किसी से बहुत मिला-जुला नहीं। गाँव के लोगों को शक है कि शायद वह·····वह तेरा भाई था।"

"मेरा भाई ?" पूरो मानो अनायास बोल उठी।

"कुछ कहा नहीं जा सकता। मुझे तो गाँव गये भी कितने दिन हो गये हैं। वह जो आदमी आया था, वह यह सब बातें बतला रहा था।" कह कर रशीद फिर चुप हो गया।

पूरो के सिर में जैसे चक्कर आने लगे।

"मेरा भाई ?·····मेरा भाई अब जवान हो गया होगा। मुझे उसकी सूरत देखे दस-बारह बरस तो हो ही गये हैं। कौन जाने अब देखने में कैसा लगता हो। उसे अचानक देख लूँ तो शायद पहचानूँ भी नहीं। मसें भीगने लगी होंगी। नौ-दस बरस का तो यह जावेद ही होने आया।" पूरो के मन में अनेकों विचार उठने लगे।

रशीद ने उसे केवल इतना और बताया कि पूरो-हर के पुराने मकान के सम्बन्ध में उसने किसी आदमी से पूछा था कि यह घर किसका है, पर अपने सम्बन्ध में अपने मुँह से उसने किसी को कुछ नहीं बताया। लोगों को केवल शक ही है। किसी ने अपने कानों से कुछ नहीं सुना।

"क्या सचमुच वह गाँव आया होगा ? उसे मेरा ध्यान आया होगा, उसकी बहन, उसकी अपनी बहन, उसकी सगी मां-जाई बहन·····।" पूरो के मन में उथल-पुथल होने लगी, उसकी आँखों में आँसू आ गये।

फिर उसे आग लगने का दुख भूल गया, जले हुए गेहूँ की राख में

से माँ-जाए भाई-बहनों का स्नेह उभरने लगा। प्रेम की एक उज्ज्वल चिंगारी उसके हृदय में चमकने लगी।

"कौन जाने उसने आग लगायी है, शायद अपने भरे हुए दिल का गुबार निकालने के लिए इस प्रकार बदला लिया है। उसकी जवान काया में नया लहू चलता होगा। कौन जाने उसे बहन के दुख का ध्यान व्याकुल करता हो·····मैं एक बार उसका मुँह देख लेती! कौन जाने मेरे भाग्य में क्या लिखा हुआ है!" ऐसे ही पूरो सोचती रही।

फिर उसके मन में चिन्ताये आने लगी। एक घड़ी पहले पूरो का संबंध उनके साथ था जिनका मनों अन्न जलकर राख हो गया था, और एक घड़ी बाद पूरो का अपनत्व उसके साथ हो गया था जिसने शायद उस अन्न को जलाकर राख कर दिया था।

"आग लगाने वाला कहीं वह ही न हो।··· ··कहीं आग किसी और ने लगायी हो और शक-शुबहे में वह पकड़ा जाय!·····" पूरो की चिन्ता बढने लगी। कुछ भी हो वह अपने भाई की कुशल चाहती थी। वह सोचती थी, कौन जाने उसके भाई के हृदय में दुःख और प्रेम की कोई आग जल रही हो, उसी जलती आग में से उसने एक चिनगारी खेतों को लगा दी हो। शायद उसके भाई को यह भी पता न होगा कि रशीद छत्तोआनी में नहीं रहता।

पूरो निढाल होकर अपनी चारपाई पर लेट गयी। विचार उसके मन में डूबते-उतराते रहे।

जब पूरो की आँख लगी—उसके सामने आग ही आग लगी हुई थी, नीचे धरती पर घास के तिनकों से लेकर पीपल की-सी ऊँचाई तक सब कुछ जल रहा था। फिर पूरो ने सपने में देखा, एक सुन्दर नव-युवक आग की ऊँची उठती हुई लपटों के पास बैठा अपने हाथ ताप रहा है।

पूरो चौंक कर जाग उठी। पूरो का जोड़-जोड़ दुख रहा था।

पूरो को लगा, इतने दिनों से उसकी छाती में जो धुकधुकी-सी लगी हुई थी, जिसके लिए वह कभी अजवायन फाँकती थी, कभी कच्ची लस्सी पीती थी, आज उसमे से लपटें निकल-निकल कर उसके शरीर को जला रही थी। पर पूरो की समझ में नही आता था कि इस आग से उसके शरीर को सेंक लग रहा था या कि उसके भाई के स्नेह की ज्योति उद्दीप्त हो रही थी।

१९४७

जिस तरह खरबूजा फाँक-फाँक हो जाता है, उसी प्रकार शहरों में गाँवों में, मनुष्यों से मनुष्य फटते जाते थे।

जैसे हवा के साथ उड़-उड़ कर धूल आती है वैसे ही आस-पास के कस्बों से खबरें आती थीं। आदमी पर आदमी मारे जा रहे हैं, घर के घर जल रहे हैं। पड़ोसी को पड़ोसी मार रहा है। राह चलते को राह चलता तलवार के घाट उतार जाता है। लोगों की जान सुरक्षित नहीं थी, उनका माल सुरक्षित नहीं था।

पूरो सब कुछ आँखों से देखती थी, कानों से सुनती थी। उसके अपने गाँव में और आस-पास के गाँवों में भी लोग लोहा इकट्ठा कर रहे थे, लोहे पर सान धर रहे थे, अपने घरों की छतों पर ईंटें इकट्ठी कर रहे थे, भाले और बरछियाँ संभाल-संभाल कर अपनी कोठरियों में रख रहे थे।

"यहाँ हमारा अपना राज होगा, यहाँ हमारी अपनी हकूमत होगी" हरएक यही कहता था। "यहाँ हम हिन्दू का बीज भी रहने नही देंगे" लोग चौराहों पर खड़े हो-हो कर कहते थे।

"कभी ऐसा होते भी सुना है?" पूरो बार-बार सोचती। भला इतनी सृष्टि जायेगी कहाँ?" पूरो रह-रह कर सोचती।

"लोगों को झूठमूठ एक जनून आता है" पूरो कहती, "चार दिनों की आँधी है, आयेगी और चली जायेगी।"

पर लोग थे कि मानो पागल हो गये थे, बस बुरी-बुरी बाते ही करते थे। कही से भी भली खबर न आती थी। फिर पूरो ने सुना शहरों मे गलियाँ लहू से भर गयी है, बाज़ार के बाज़ार मुर्दो से पट गये है, सड़ती हुई लाशों से बदबू उठने लगी है, उन्हे कोई जलाता फूंकता नहीं, कोई उन्हे दबाता-गाड़ता नही, लोग कह रहे थे, इतने मुर्दों की सड़ाँद से सारे देश में बीमारी फैल जायेगी।

फिर उस वर्ष की पन्द्रह अगस्त बीत गयी। गाँव में ढोल बजे, चाँद और तारों वाले हरे रंग के झंडे लगे। प्रतिदिन मसजिद में लोग इकट्ठे होते थे। गाँव के हिन्दुओं के मुख पर मानो किसी ने हल्दी फेर दी थी।

फिर पूरो ने सुना कुछ शहरों में सीमाएं बना दी गयी थी। इनके एक ओर मुसलमान रह गये थे, दूसरी ओर सारे हिन्दू चले गये थे। फिर पूरो ने सुना, उधर दूसरी ओर से मुसलमान मरते कटते चले आ रहे थे, बहुत-से वही मर गये थे, बहुत-से रास्ते में खत्म हो गये थे, बहुत-से इधर पहुँच कर मर रहे थे।

पूरो के कान सुन-सुन कर जैसे फट चले हों!—पूरो ने सुना, मुसलमान हिंदुओं की लड़कियों को और हिन्दू मुसलमानों की लड़कियों को उटाकर ले गये है, कइयों ने उन्हें अपने घरों में डाल लिया है,

कइयों ने उन्हें जान से मार डाला है, और कइयो को वह नंगा करके गलियों और बाजारों मे घुमा रहे हैं।

गुजरात्र जिले के उन गाँवों में, जो पूरो के गाँव के आस-पास लगे हुए थे, सबसे पीछे उपद्रव हुए। पूरो के अपने गाँव वाले, उसकी अपनी बिरादरी वाले, पूरो के अपने रशीद को छोड़ कर, रशीद के सारे सम्बन्धी-कुटुम्बी भी, वहशी बने फिरते थे। पूरो को साहस न होता था, और न रशीद के बस की बात थी कि किसी को कुछ समझावें बुझावे।

उनके आस-पास के गाँवों के हिन्दू भागने लगे। उनकी गाये अपने खूंटों से बंधी रह गयी, उनकी भैसें भाँ-भाँ डकराने लगीं—उनके भरे-भराये घर पीछे छूट गये, उनके खेत, मालिकों के मुँह ताकते रहे। वह रातों-रात भागते, वह गाँवों की सीमा पर मारे जाते, वह बीसियो कोस चलते रहने के बाद मरे हुए मिलते।

पूरो के गाँव के सारे हिन्दू अपनी एक बड़ी हवेली मे चले गये थे। यदि कोई खिड़की या दरवाजा खोलकर बाहर आ जाता तो तुरन्त मृत्यु उसे अपने झपेटे में ले लेती थी। कहते थे कि हवेली में उन्होंने अनाज इकट्ठा किया हुआ था। कोई हिन्दू बाहर देखता नही था। कोई हिन्दू स्त्री बाहर झाँकती नहीं थी।

पूरो के गाँव में केवल मुसलमान रह गये थे। गाँव में हिन्दू पशुओं की भाँति हवेली में फँसे हुए थे। एक दिन उसके गाँव वालों ने मिलकर हवेली पर हमला किया। उन्होंने निश्चय किया था कि वह हवेली वालों का नाम मिटा देंगे। उन्होंने बन्द घरों के ताले तोड़ डाले, अलग-अलग घरों के मालिक बन बैठे। यदि कभी रात बिरात कोई हवेली से नीचे उतरता, अगले दिन पूरो गांव में उसकी लाश पड़ी देख लेती थी।

एक दिन उन्होंने न जाने किस तरह हवेली के दरवाजों और खिड़कियों पर तेल डाला, और तेल से भीगे हुए दरवाजों और खिड़कियो में आग भी लगा ली थी जब हिंदू मिलिटरी के ट्रक उनके गाँव में पहुँच गये।

हवेली के भीतर से आग की लपटों जितनी ऊँची चीखें भी निकल रही थीं जब कि मिलिटरी ने आग बुझायी और भीतर से आदमी निकाले। उन घबराये हुए लोगों को उन्होंने लारियों में बिठा दिया। आधे जले हुए तीन आदमी भी निकाले गये जिनके शरीर से चरबी बह रही थी, जिनका माँस जल कर हड्डियों से अलग-अलग लटक गया था। कोहनियों और घुटनो पर से जिनका पिंजर बाहर को निकल आया था। लोगों के लारियों में बैठते बैठते उन तीनों ने जान तोड़ दी। उन तीनों की लाशों को वहीं भूमि पर फेंक कर लारियां चल दी। उनके घर वाले चीखते चिल्लाते रह गये, पर मिलिटरी के पास उन्हें जलाने-फूंकने का समय नहीं था।

पूरो का गाँव खाली हो गया था। पराई कौम का कोई आदमी भी बाकी नहीं रह गया था। केवल तीन लाशें हवेली के बाहर पड़ी हुई थीं जिनके पिंजर पर बचे हुए माँस को दिन में ही गाँव के कुत्तों और कौवों ने नोच लिया था।

पूरो की आँखों में जैसे किसी ने सीसे के कंकड़ डाल दिये हों! एक दिन पूरो ने दस बारह मनचले नवयुवकों को एक नंगी जवान लड़की को अपने आगे करके, दोनों हाथों से ढोल-ढमक्के बजाते अपने गाँव के पास से गुजरते देखा। न जाने वे किस गाँव से आये थे और किस गाँव को चले गये।

पूरो का लगता मानो इस ससार में जीना दूभर हो गया हो, मानो

इस युग में लड़की का जन्म लेना ही पाप हो।

उसी दिन सध्या के समय पूरो को गन्ने के खेत में छिपी हुई एक लड़की दीख पड़ी जिसे रात के घोर अंधकार मे वह अपने घर ले आयी।

उस लड़की ने पूरो को बताया कि पास के गाँव में एक कैम्प खुला हुआ था जहाँ गाँव के हिंदू इकट्ठे हो गये थे और प्रतीक्षा कर रहे थे कि मिलिटरी उन्हे यहाँ से निकाल कर कब दूसरी ओर हिंदुस्तान ले जायेगी। इस ओर की फौज कैम्प की रखवाली करती थी। पर प्रतिदिन रात को कुछ मुसलमान चोरी छिपे आकर कैम्प की जवान लड़कियो को उठा कर ले जाते थे और अगले दिन तड़के ही उन्हें वापिस छोड़ जाते थे।

उस लड़की ने पूरो को बताया कि पूरी नौ रातें हो गयी थीं उसे रोज रात को नये नये लोगो के घरों मे जाना पड़ा था। पिछली रात वह किसी प्रकार अपने ले जाने वाले को धोखा देकर भाग गयी थी, दौड़ते-दौड़ते वह इस गाँव में आ पहुँची थी। जब सुबह के समय उजाला होने लगा तब वह निश्चय न कर सकी कि किधर जाय। उसने दिन का सारा समय ईख के खेत मे लुके-छिपे पड़े रह कर बिताया·····

पूरो यह सब सुन-सुन कर विक्षिप्त-सी हो गयी थी। उससे और न सुना जाता था। पूरो को जैसे इन बातों का विश्वास न होता था। पूरो ने उस लड़की को अपने घर की पिछली कोठड़ी में रख लिया। वहाँ पूरो के घर का गेहूँ पड़ा था, भैंस का खली-भूसा पड़ा हुआ था।

दूसरे दिन दो आदमी दौड़े-दौड़े आये। उन्होंने सारे गांव वालों से पूछा कि किसी ने एक लड़की देखी है? वे गांव वालों के आँगनों में भी झाँक-झाँक कर देख गये, पर लड़की का कुछ पता न चला।

पूरो के मन में कई प्रकार के प्रश्न उठते, पर वह उनका कोई उत्तर न सोच सकती। उसे पता नही चलता था कि अब इस धरती पर, जो कि मनुष्य के लहू से लथपथ हो गयी थी, पहले की भाँति गेहूँ की सुनहरी बालियाँ उत्पन्न होंगी या नही ·· ···इस धरती पर जिसके खेतों में मुर्दे पड़े सड़ रहे हैं अब भी पहले की भाँति मकई के भुट्टो मे से सुगन्ध निकलेगी या नहीं···क्या ये स्त्रियाँ इन पुरुषों के लिए अब भी सन्तान उत्पन्न करेंगी जिन पुरुषो ने इन स्त्रियों की अपनी बहनो के साथ ऐसा अत्याचार किया था।·····

हिन्दुस्तान जाता हुआ एक काफ़िला पूरो के गाँव के पास आ कर रुका। पुरुष और स्त्रियाँ, झुंड के झुंड, पैदल चलते थे। बैलगाड़ियो मे उन्होने बच्चों को भर दिया था। कुछ सिपाही काफ़ले के आगे थे और कुछ पीछे। यात्रियो की आँखें भारी हो गयी थी, रास्ते की धूल दुर्दैव की भाँति उनके मुँह सिर पर मंडरा कर अब वहीं जम गयी थी।

पूरो के गाँव पहुँचते-पहुँचते काफिले को रात पड़ गयी। उसे वही रुकना पड़ा।

पूरो का चित्त व्याकुल था। उसे रह-रह कर एक ही विचार आता कि यह सडक रत्तोवाल से आती है, इस काफले मे अवश्य उसका रामचन्द होगा ···· एक अन्तिम भेंट··· बस एक बार····· अन्तिम बार·····उसके बाद वह इस देश मे ही नही रहेगा·····उसके बाद फिर कभी भी वह उसका कुशल न सुन सकेगी·····उसके बाद फिर कभी भी उसके गाव की हवा भी इस ओर न आयेगी·····

काफले वाले अपने बचे-खुचे गहने और रुपये देकर रास्ते के गाँवों के लोगों से अनाज मोल लेते थे। गाँव के कुछ स्त्री-पुरुष जाकर उनसे सौदा कर लेते थे और पहरे वाले सिपाहियो की देख-रेख में अपना मकई-बाजरा सोने के भाव बेच लेते थे। इसी बहाने जाकर पूरो ने काफले

पर एक नजर मारी·····

पूरो ने काफले मे बैठे हुए रामचन्द को देखा। रामचन्द ने रत्तोवाल के खेतो में खडी हुई आँसुओं से भीगे मुँह वाली पूरो को पहचाना।

रत्तोवाल के खेतो मे पूरो का मुँह उसके डूबते हुए साहस ने बन्द कर दिया था, आज उसका मुँह पास खडे हुए पहरे के सिपाहियों ने बन्द किया हुआ था। पूरो कुछ कह न सकी।

"तुम्हे अनाज दाना कुछ चाहिए ?" उसने रामचन्द की ओर मुँह करके कहा।

"हाँ" रामचद की आँखे पूरो के मुख पर से न हटती थीं, शायद अब भी वह उसे पहचानने की चेष्टा कर रहा था।

"अच्छा, रुपये तैयार रखना, मै रात को पहुँचा जाऊँगी।" पास खडे हुए सिपाही का ओर देखकर पूरो ने फिर रामचन्द की ओर देखा और फिर लौट आयी।

पूरो ने रशीद से कहा कि उसे घर मे छिपी हुई लडकी को क़ाफले मे पहुँचाना है और वह आटे और मिट्टी के पुरवे मे रखे हुए घी को कपड मे बाँधकर और लड़की को साथ लेकर रात के अँधेरे में सोये हुए काफले की ओर चल दी।

दिन-दिन भर चलने से लोग थके हुए पड़े थे। हर समय का भय चाहे चमगादड़ो की तरह उनके सिर पर मडरा रहा था पर फिर भी वे घोड़े बेचकर सोये हुए थे।

"मै रात को पहुँचा जाऊँगी" रामचद के कानों में पूरो की आवाज़ शाम से ही गूज रही थी। रामचन्द रात की निस्तब्धता मे किसी के पैरो की आहट ले रहा था।

सिपाही घूम कर पहरा दे रहे थे। पूरो पंजो पर चल कर क़ाफ़ले मे जा पहुँची।

सिर से गठडी उतार कर उसने रामचन्द के आगे रख दी। और लड़की से बैठ जाने को कहा।

"तू पूरो ही है न ?" आज भी रामचन्द ने वही रत्तोवाल के खेतों वाला प्रश्न किया।

"अब भी पूछना बाकी है ?" पूरो ने उलाहने से कहा। अपने जीवन में रामचन्द को उसका यह पहला और अन्तिम उलाहना था। रामचन्द ने सिर झुका लिया।

"मेरे माता-पिता की कोई खबर ?" पूरो ने एक गहरा श्वास लेकर पूछा।

"वह तो जब के ब्याह कर के गये है लौटे ही नही, पर ....." रामचन्द कहते-कहते रुक गया।

"ब्याह ? किसका ब्याह ?" पूरो ने पूछा।

"तेरे खो जाने के बाद उन्होंने एक रात चुपचाप तेरी छोटी बहन के फेरे मुझसे कर दिये और तेरे भाई के साथ मेरी बहन के फेरे हो गये। तब से वे गाँव नहीं लौटे है। आजकल सियाम ही हैं। पर ....." रामचन्द फिर कहता-कहता रुक गया।

"मेरी बहन . फिर तो वह भी काफ़ले मे होगी ?" पूरो के लिए रामचन्द के साथ उसकी बहन के ब्याह की बात बिलकुल नयी थी।

"नहीं, पिछले दिनों तेरा भाई आया था, वह अपनी औरत को मायके छोड़ गया था और बहन को अपने साथ ले गया था। जो वह यहाँ होती तो वह भी ..।" रामचन्द की आँखों में आँसू छल-छला आये।

"वह भी.....क्या हुआ किसे ?....." पूरो की समझ मे न आया था।

"पता नही लगा, किस समय मेरी बहन को उठा कर ले गये। जब

हम घर से निकले वह साथ थी। मैं बुढ़िया माँ को पीठ पर उठाये क़ाफले में आया हूँ तब तक वह मेरे पीछे-पीछे चली आ रही थी। पर अब काफले में नहीं है....." रामचन्द ने गले से ज़ोर से निकलने की चेष्टा करते हुए स्वर को रोक-रोक कर कहा। उसको रुलाई आ रही थी, पर उसने अपनी पगडी को अपने मुँह में डाल लिया। "मेरी माँ ने पीट-पीट कर अपने शरीर को नीला कर लिया है" रामचन्द ने कहा।

पूरो की अतड़ियों मे एक ऐठन-सी पड़ने लगी।

"कोशिश करना कुछ पता लग जावे। न जाने जीती है या मर गयी।" रामचन्द ने फिर से कहा। अतड़ियों मे उठती हुई पीड़ा के कारण पूरो कुछ बोल न सकी।

"उसका नाम शायद लाजो है ?" पूरो को याद आया। अपनी सगाई के समय उसने अपने भाई की मंगेतर का नाम सुना था।

"हाँ, उसकी बाँह पर भी उसका नाम गुदा हुआ है" रामचन्द ने बताया। सिपाही घूम-घूम कर पहरा दे रहे थे। सोये हुए लोगों के बीच में बैठे हुए रामचन्द और पूरो धीरे-धीरे बातें कर रहे थे।

"इस बेचारी को मैं तुम्हें सौंपने लायी हूँ। इसे अपने काफले में ले जाओ। हिन्दुस्तान जा कर पता कर लेना, जो इसके माँ-बाप मिल गये तो....." पूरो ने लड़की की बाँह रामचन्द के हाथ में पकड़ा दी।

"मेरा भाई यहाँ आया था, चाहती थी उसे एक बार देख लेती..." पूरो ने अपनी कामना प्रकट करते हुए कहा।

"पिछले दिनों .....जब तुम्हारे छत्तोआनी वाले खेतों में आग लगी थी, याद है ?....." रामचन्द कह रहा था।

"आग ?.....हाँ, आग लगी थी। क्या यह बात सच है कि मेरे भाई ने ही आग लगायी थी ?" पूरो को उस दिन ध्यान आ गया जब

रशीद ने एक अफ़वाह सुनायी थी।

"हाँ, उसी ने आग लगायी थी। तेरा तो उसे पता मालूम नहीं था कि तू कहाँ रहती है। गुस्से में आकर उसने रशीद के खेत जला डाले।"

पूरो को रोमांच हो आया। उसका भाई अब जवान हो गया था, उसके हृदय मे बदले की ज्वाला धधक रही थी, उसके दिल मे बहन की याद थी। साथ ही उसे उस दुर्घटना की याद आयी, उसके भाई की स्त्री गुम हो गयी थी, किसी ने उसे ज़बरदस्ती उठा लिया था, न जाने वह किस हाल मे थी, वह.....उसके रामचन्द की बहन.....

"मुझे यहाँ सक्कड़आली के पते से चिट्ठी लिखना, अपना पता भी लिखना, जो लाजो का कुछ पता लगा तो मैं लिख भेजूँगी....." पूरो ने कहा।

रात का अंधेरा हल्का होता जा रहा था। सिपाही काफ़ले वालो को जगा रहे थे। काफ़ले को आगे बढ़ना था। पूरो उठ खडी हुई।

पूरो ने रामचन्द को हाथ जोड़े। वह कुछ बोल न सकी।

पूरो ने क़ाफ़ले से बाहर पाँव धरा ही था कि एक सिपाही ने उस पर लाठी तान ली "तू कौन है ? कहाँ चली है ?"

"मैं अनाज बेचने आयी थी।"

"कितने के बेचे है ? पैसे दिखा।" सिपाही ने चिल्लाकर कहा।

पूरो ने चादर में हाथ डाल कर अपनी चाँदी की बाँक उतार ली और सिपाही को दिखा कर तेज़ क़दमों से गाँव को लौट गयी।

सिपाही ने शायद यह न सोचा कि हिन्दू चाँदी के आभूषण प्रायः कम ही पहनते है, इस औरत को अनाज के बदले चाँदी की बाँक कहाँ से मिल गयी !

पूरो की भाभी

रात को चारपाई पर पड़े-पड़े पूरो छत के काले शहतीरों को देखती रहती। पूरो का मन उन लोगों की बन्द कोठरियों के चक्कर लगाता रहता जिनके भीतर लोगों ने औरों की लड़कियों, बहनों और स्त्रियों को जबरदस्ती डाल रखा था। उन्हीं में एक लाजो होगी। लाजो, रामचंद की बहन, उसकी अपनी भाभी! लाजो का अनदेखा मुख पूरो की आँखों के आगे आ जाता था, टूटे हुए पत्ते जैसा मुँह, झड़े हुए पख जैसा चेहरा!

पूरो सोचती थी, लाजो ब्याही हुई है, शायद उसके कोई बाल-बच्चा भी हो। उसके दिल पर न जाने क्या-क्या बीता होगा, उसके शरीर पर क्या गुजरी होगी। न जाने वह इस समय कहाँ है, मैं उसे कैसे खोजूँ मैं उसे कैसे पहचान सकती हूँ? उस दिन ईख में छिपी हुई वह लड़की लाजो ही निकल आती, मैं उसे काफले में मिला आती.....मैं उसे रामचंद के हवाले कर आती.....

पूरो ने सब बात रशीद को बतायी और उसके पाँव पर गिर पड़ी। "जैसे भी हो मुझ पर दया करो! मैंने सारी उमर तुझसे कुछ नहीं माँगा। मुझे लाजो का पता ला दो, जैसे भी हो" पूरो की आँखों के आँसू नहीं रुकते थे। रशीद ने पूरो से प्रतिज्ञा की कि वह अपनी ओर से कोई कसर न होने देगा।

रशीद बहुत सोचने के बाद इसी निश्चय पर पहुँचा कि हो न हो लाजो है रत्तोवाल में ही। वह घर से अपने भाई के साथ निकली, पर क़ाफ़ले में मिली नहीं। काफले में इकट्ठे होने वाले लोगों की आपाधापी में ही वह किसी के हाथ पड़ गयी होगी।

रशीद ने रत्तोवाल के दो चक्कर लगाये, पर वह लोगों के मकानों में कैसे झाँक सकता था। उसने गाँव की कितनी ही दुकानों से सौदा-सुलुफ खरीदा, पर उसे लाजो का कोई सुराग़ न लगा। इतना उसने अवश्य सुन लिया था कि गाँव के कुछ लड़कों ने जाते हुए काफ़ले में से दो चार लड़कियों को उठा लिया था। रशीद को पूरा विश्वास था कि लाजो भी उन्हीं में है।

उस गांव वाले रशीद से परिचित नहीं थे, न ही उस गाव में रशीद का कोई सबंधी रहता था। वह किसके पास चार दिन रहता, किससे वह गांव के हाल-चाल लेता।

पूरो ने रशीद के साथ एक चाल निकाली। बावली वाले साईं को वह जानते थे। वे दोनों बच्चों को लेकर साईं की एक कोठरी में जा टिके। वैसे भी दिन रात की चिन्ता के कारण पूरो की आँखें घुटी घुटी-सी रहने लगी थीं। पूरो रोज सवेरे नमाज पढ़कर बावली के जल से अपनी आँखें धोती, साईं को मिठाई चढ़ाती और दिन में कोरे खेसों की गठरी बाँध कर गाँव में बेचने चली जाती।

उस समय गाँव के मर्द खेतों पर होते, गाँव की स्त्रियाँ घरों में

अपने गृहस्थी के काम-काज में लगी होती। पूरो हर घर में जाकर पूछती। पूरो खेसों के दाम इतने अधिक बताती थी कि उसका सौदा कठिनाई से पटता था। वैसे भी गाँवों में लोगों के पास अपनी ही बनायी हुई दरियाँ और खेस बहुतेरे होते है,—फिर उन्हें लूटमार से भी बहुत कुछ मिल गया था। पूरो से खरीदने की किसी को आवश्यकता न थी, पर पूरो ढीठों की भाँति उनके आँगनों में जा बैठती, भीतर बाहर झाँकती, स्त्रियों को बातो में लगा लेती, गाँव की लूट-मार की बातें छेड देती, उनसे हंस-हस कर पूछती कि किसके हिस्से क्या-क्या आया था, फिर हिंदुओं के छोडे हुए मकानों की बात छेड लेती। पूरो रामचन्द का घर पहचानती न थी, पर गाँव वालों से बात-चीत करके उसने रामचन्द के मकान का पता लगा लिया था। रशीद और पूरो को शक था कि हो न हो जिसने लाजो को उठाया है उसने शायद लाजो के मकान को भी सभाल लिया है। पूरो ने उस मकान का भी एक आध फेरा लगाया, पर हर बार एक बुढ़िया उसे बाहर की ड्योढ़ी से ही लौटा देती थी, कह देती थी कि हमे कुछ नही लेना है।

जैसे कोई किसी के घर मे जबरदस्ती घुसता है वैसे ही एक दिन पूरो भी उस मकान के आँगन में चली गयी।

"अम्मा, तुम लेना कुछ नहीं, पर देख तो लो। मैं तुमसे देखने के दाम तो नहीं माँगती।" और पूरो ने खेसों की गठरी धरती पर धर कर खेस इधर-उधर बखेर दिये। आँगन म उस बुढ़िया के अतिरिक्त और कोई नही था।

"अल्ला खैर करे! मुझे एक घूंट पानी पिला दो, सबेरे से प्यासी हूँ।" पूरो ने साहस करके बुढ़िया से कहा।

"अरे पानी छोड़ तू लस्सी पी ले, पर जो तू चादरे और खेस बेचना चाहती है तो किसी शहर जा। यहाँ न लोग सूत कातते है, न कपड़ा

बनते हैं। गाँवों में किसके पास खेसो का घाटा है" बुढ़िया ने पूरो को सलाह दी, और भीतर कोठरी की ओर मुख करके उसने आवाज दी "ओ नेकबख्त,एक कटोरा लस्सी तो भर के ले आ।"

पूरो का जी धड़कने लगा। भीतर से आने वाली लड़की का चेहरा सचमुच टूटे हुए पत्ते की भाँति था, झड़े हुए पख की तरह था। पूरो का माथा ठनका, हो न हो यही लाजो है।

जब तक पूरो को लाजो के किसी जगह होने का शक नहीं पड़ा था तब तक उसके मनमें एक लगन थी कि कहीं लाजो दीख जाय। अब उसे शक पड़ गया था कि लाजो उसी घर में है, पर अब उसकी समझ में न आता था कि अपनी शका का समाधान कैसे करे।

"यह तुम्हारी लड़की ठीक तो है?" पूरो ने बुढ़िया से बड़ी सहानुभूति से कहा, और लड़की के हाथ से लस्सी का कटोरा ले लिया।

"ठीक ही है·····ऐसे ही कुछ·····" बुढ़िया ने बात आयी गयी कर दी।

"थोड़ा नमक देना, लस्सी में मिला लूँ।" पूरो ने लस्सी का एक घूँट भर कर कटोरा हाथ में लिये रखा।

लड़की ने चुपचाप नमक लाकर पूरो के आगे कर दिया। उसके हाथ से नमक लेते समय पूरो ने उसकी एक उंगली को दबाया। नवयुवती ने जरा चौक कर पूरो की ओर देखा, पर न तो उसके होंठों पर हंसी की रेखा आयी न उसके मुँह से कोई शब्द ही निकला। लड़की ईख के छिलके की भाँति पेरी हुई दीख पड़ती थी।

पूरो को और भी विश्वास हो गया कि यह लड़की लाजो हो या न हो, पर कोई जबरदस्ती भगाई हुयी लड़की अवश्य है। घर के सम्बन्ध में पूरो को पता लग गया था कि यह रामचन्द का घर था।

और पूरो को यह भी पक्का विश्वास होता जाता था कि हो न हो यही लडकी लाजो है।

लस्सी पी कर कटोरा धरती पर रखते हुए पूरो ने उस युवती की बाँह पकड़ ली।

"इधर आ, मैं तेरी नाड़ी देखूँ। रग तो तेरा हल्दी जैसा हो रहा है।" कहते कहते पूरो ने एक हाथ से उसकी बाँह पर से कुरता जरा पीछे को हटा दिया। नवयुवती की बाह पर हिन्दी मे उसका नाम गुदा हुआ था, लाजो। फिर भी वह कुछ न बोली चाली। उसके होठों पर पूस माघ के कोहरे की भाँति चुप्पी जमी हुई थी।

"कोई गंडा बाँध दे न! लडकी घर से परच जाय। लडके से भी कुछ नही बोलती चालती।" बुढिया ने उदास मुख से कहा।

पूरो को अपना आप सभालना कठिन हो रहा था, फिर भी उसने जल्दी से उत्तर दिया "मेरे पास जैसा जन्तर है, उससे यह कुछ ही दिनों मे मकई के दाने की भांति खिल उठेगी।"

"तू जो माँगेगी तुझे दूँगी, मुझे वह जन्तर ला दे।" बूढ़िया ने पूरो की चादर पकड़ ली।

"यह कौन बड़ी बात है, मैं कल ही ले आऊँगी, अल्ला ने चाहा तो·····" कहते-कहते पूरो ने खेसों की गठरी बाँध ली। नवयुवती गंगे बहरे बुत की भांति उसकी ओर देख रही थी।

खेसों की गठरी के भार से आज पूरो की कमर टूटती जा रही थी। बड़ी कठिनाई से पूरो अपनी बावली वाली कोठरी में पहुँची।

"अब आगे, तू जाने तेरा काम जाने" पूरे ने रशीद को सारी बात बता कर कहा।

"कोई ऐसी ब्योंत बने·····" रशीदा सोचने लगा।

"जैसे मुझे घोड़ी पर उठा लाया था, वैसे ही अब भी हिम्मत

कर·····" पूरो ने रशीद के एक चुटकी ली और हँस पड़ी।

फिर पूरो और रशीद ने कई युक्तियाँ सोची, पर कोई भी उन्हें जँचती नही थी। रशीद कहता था कि यहाँ से उसे भगा कर ले जाना तो कठिन नहीं है, पर उसे आगे कैसे पहुँचायेंगे ?

पूरो के मन मे एक विचार आया जो अब तक कभी न आया था, मेरे माता-पिता ने मुझे अपनी बेटी को तो वापस कबूल नहीं किया, क्या अब अपनी बहू को स्वीकार कर लेंगे ? उन्होंने यदि वापस लेने से इनकार कर दिया तब क्या होगा ?··· ··"

रशीद ने पूरो को बताया कि उनकी सरकार की ओर से सूचनायें निकली हैं कि ज़बरदस्ती ले जायी गयी लड़कियोका खोज-खोजकर लौटा दो क्योकि उनके बदले में दूसरी ओर से इसी प्रकार खोजी हुई लड़कियां मिलेंगी। लड़कियों के माता-पिता उन्हें वापस ले लेंगे।

पूरो के हृदय में एक कसक-सी उठी, उसकी बार दुनिया के सब धर्म उसके रास्ते मे काँटे बनकर बिछ गये थे, उसके माता-पिता ने उसे स्वीकार नही किया, उसके ससुराल वालो ने उसे स्वीकार नहीं किया। आज सब मज़हबो के मान टूट चुके थे, आज·····

अपने विषय में सोचना पूरो ने छोड़ दिया। वह लाजो के संबंध में सोचने लगी।

वह रात पूरो ने तारे गिन-गिन कर काटी। सवेरा होते ही वह इस टोह में लग गयी कि लाजो के घर वाली बुढ़िया अपने बेटे के लिए रोटी ले कर खेतों को कब जाती है। उसने फिर दो-एक कोरे खेस सिर पर रखे और कपड़े के एक टुकड़े में थोड़ी-सी राख बांध कर चल दी।

लाजो के घर के भिड़े हुए दरवाजे को अपने हाथों से खोलते समय पूरो ने सारे पीर-फ़क़ीरों का ध्यान किया। एक समय से भूले हुए देवी-देवता उसे स्मरण हो आये। पहले प्रायः रब और खुदा का नाम

लेने समय पूरो कहा करती थी कि रब उसका सौतेला पिता था और खुदा की वह सौतेली बेटी थी, कोई भी रब या खुदा उसके दुःख दर्द की परवाह न करता था। पर आज पूरो के हृदय पर एक प्रकार का भय छा गया, पूरो ने झिझकते हुए किसी भी रब रहीम से प्रार्थना की कि किसी प्रकार लाजो से आज उसकी भेंट अकेले में हो जाय! .....

पूरो को लाजो के घर पहुँचते-पहुँचते भी दोपहरी का समय हो गया। बुढिया अपने बेटे को रोटी देने गयी हुई थी। लाजो अकेली ही आँगन मे बिना बिछावन की खाट पर पडी थी।

"अम्मा कहाँ है ?" पूरो ने आँगन में पैर धरते ही पूछा।

"खेत गयी है" लाजो ने कल की खेस बेचने वाली की ओर देखकर कहा। लाजो के हृदय में खेस वाली को ओर नया जागा हुआ आकर्षण उसके मुख पर स्पष्ट दीख पड़ रहा था। लाजो उठकर खाट पर बैठ गयी।

एक क्षण में ही पूरो को लाजो की मुखाकृति मे अपनी माँ, अपनी बहिन, और अपनी भाभी के मुख दीख पड़े। वह उसके गले से चिपट गयी।

पूरो को लगा कि वह रो उठेगी, इतने जोर से, कि उसका रोना दीवारों को फाड़ देगा, उसका रोना खेतों को पार कर जायेगा, उसका रोना गाँवों को लाँघ जायेगा, उसका रोना शहर से भी आगे निकल जायेगा, उसका रोना··· ··

पूरो ने अपने रोने को गले के बाहर न निकलने दिया।

"तू लाजो है····· मेरी भाभी ·····"पूरो ने अपने हृदय में उठते हुये तूफान को दबाकर कहा।

"तू पूरो है ?" लाजो ने जरा उसकी छाती से हटकर उसका मुख देखा। पर लाजो ने पूरो की पहले कभी न देखा था जो अब पहचानती,

फिर भी लाजो को पूरो का मुख बिलकुल उसके भाई जैसा ही लगा, अपने पति जैसा ·····लाजो के हृदय मे एक लाज-सी उत्पन्न हुई, मानो वह अपने पति के मुख की ओर आँख उठाकर न देख सकती हो····· लाजो पूरो की गोद में गिर पड़ी।

लाजो के अन्तस्तल मे उस समय जो कुछ बीत रहा था, शायद वह पूरो की नसो में प्रवेश करता जा रहा था। पूरो को कुछ भी पूछने की आवश्यकता न थी। पूरो ने लाजो को कलेजे से लगाये रखा।

"कोई आ जायेगा, लाजो ! मेरी बात सुन।" पूरो को बीतते समय का ध्यान आया। लाजो की सिसकियाँ न रुकती थी, उसकी साँस ठिकाने न आती थी।

"वह कब तक लौट आती है ?" पूरो ने पूछा।

"मुझे कुछ पता नही। मुझे अपने पास ले चल।" लाजो सीधी न होती थी, पूरो की गोद को न छोडती थी।

"तुझे लेने तो आये ही है, और क्या करने आये है। मेरी बात सुन" पूरो ने लाजो को कन्धे से पकड़ कर उठाया।

"हाय, मुझे ले चल !"

"पर तू सभल कर बैठ, कोई आ जायेगा·····"

"मुझे ले कर भाग चल। मै सारी उमर तेरी बाँदी बन कर रहूँगी।"

"पागल न बन ! ऐसे भाग कर मै कहाँ ले जाऊँ। मेरी बात तो सुन।"

"हाय ! मै कहाँ जाऊँगी, मै यहीं तड़प-तडप कर मर जाऊँगी।" लाजो रोये जा रही थी। पूरो को डर था कि बात भी न हो सकेगी और बुढ़िया आ जायगी। पूरो ने अपने पल्ले से लाजो का मुँह पोंछा और समझा बुझा कर उसे चुप कराया।

"कभी तो घर से बाहर निकलती है ?"

"नहीं।"

"पर सवेरे तो खेतों को जाती होगी !"

"वह साथ होती है।"

"आज सयोग से अमावस है, आज रात को जो तू बाहर वाले कुएं के पास आ सके तो वहाँ तुझे रशीद घोडी लिये तैय्यार मिलेगा।"

लाजो जैसे झेप गयी। रात को अकेले कुएं के पास पहुचना उसे अत्यन्त कठिन लग रहा था। फिर वह रशीद को भी नही जानती थी। और यदि किसी ने देख लिया तो फिर किसी की जान भी सलामत न थी।

"मै घर से बाहर कैसे निकलू गी ?"

"रात को जब सब सो जाये तब दाँव लगा कर निकल आना।"

"वह तो दारू भी पीता है। रात को जैसे तैसे करके दो चार घूट ज्यादा दे दूँगी, पर बाहर के आँगन मे बुढ़िया....."

"बुढ़िया कुछ अफीम-शफीम नही खाती ?"

"मैंने तो खाते नही देखा।"

"एक बार जो तू वहाँ पहुँच जाय....."

"पर वहाँ...मै उसे जानती भी तो नही। जो वहाँ पर तू मिल जाय....."

"वह तो रातों रात पैंडा मार लेगा और जो मै भी साथ हुई तो फिर तो हम दोनों ही रह जायेंगी।"

"मैंने तो उसे कभी देखा ही नही।"

"तू मुझ पर भरोसा कर। तेरी तसल्ली के लिए यह कर दूँगी। यह देख मेरे हाथ की यह अँगूठी उसके हाथमे पड़ी होगी, देख लीजो।"

"आज रात दाँव न लगा तब……"

"फिर कल रात, वह पूरी तीन रातें तेरी राह देखेगा।"

"गली मे से आहट आ रही है, शायद कोई आ रहा है।"

पूरो खाट से उठकर नीचे बैठ गयी। खाट के पैताने खेसों को रख कर पूरो ने पल्ले में बँधी हुई राख की पुड़िया को देखा कि यदि बुढिया आ जाय तो उसे वह जन्तर और भस्म दे सके।

पर बुढ़िया अभी नही आयी थी।

"जो तू मुझे इस जन्तर के बहाने रोज किसी बावली या कुएँ पर ले जाय और फिर एक दिन……।" लाजो ने अपना स्वर पहले से भी धीमा कर लिया।

"इस तरह मेरे ऊपर पूरा शक हो जायगा। मै चाहती हूँ कि वह तुझे लेकर गाँव से निकल जाय और मै बाद में भी दो तीन दिन गाव मे फेरी लगाती रहूँ। मेरे ऊपर कोई उँगली न उठा सके।"

"मुझे डर लगता है कहीं कोई रास्ते में ही न पकड़ ले।"

"फिर जो किस्मत मे लिखा है वह तो होगा ही। आगे कौन से करम सीधे है ?"

"पर मै सारी उमर तेरे ऊपर भार बन जाऊँगी ?"

"यह बातें फिर करेगे, इनके लिये यह समय नही है। मेरी सलाह है कि मै अब चलू, यही अच्छा है। आज बुढिया मुझे न देखे तो ……"

"हाए ! मुझे भी ले चल।" पूरो उठने लगी तो लाजो बच्चों की भाँति उससे चिपट गयी। पूरो ने दरवाज़े की ओर देखते हुए लाजो को कस कर अपनी छाती से लगा लिया और बोली : "आज रात…… आधी रात को……कल पर मत डालना" और फिर वह खेसों को संभाल कर घर से बाहर निकल गयी।

बान की खाट पर लाजो दोनों पैर पसार कर लेट गयी। आज उसे

अपने शरीर के अंग-अंग में एक प्रकार की प्रफुल्लता का अनुभव हो रहा था। फिर जैसे लाजो को मकान की दीवारों में से आवाज आती सुनायी दी "आज रात·····आधी रात को·····।" लाजो ने दालान की एक एक ईंट को देखा। "यही मेरा घर था। यहीं मैं पैदा हुई, यही पली। यहीं मैं बड़ी हुई। इसी घर से मेरी डोली निकली। यही लौट कर मैं मायके आयी। सब इस घर से चले गये, पर मेरा मुरदा यही रुलता रहा। मैं अपने ही घर में परदेसी बन गयी। इसी घर ने मुझे पैदा किया, इसी घर ने मुझे खा लिया।" लाजो घर की चहार-दीवारी को देखने लगी। "इन दीवारों को भी लाज न आयी, इन्होंने मेरा सत्यानाश होते देखा, इन्होंने मेरी मर्यादा लुटती देखी, पर आज·····आज रात··· ··आधी रात को·····सभी दीवारें टूट जायगी, सभी चौखटें गिर पड़ेंगी ·····मैं·····।"

बुढ़िया बाहर का भिड़ा हुआ दरवाज़ा खोलकर आँगन में आ गयी थी।

"बड़े अच्छे समय गयी है" लाजो ने मन ही मन कहा।

"आज वह खेसों वाली आने वाली थी, अभी आयी तो नहीं?" बुढ़िया ने आते ही यह पहली बात पूछी और हाथ का साग-भाजी का बरतन धरती पर रख कर लाजो वाली खाट की पट्टी पर बैठ गयी।

खेसों वाली का नाम सुन कर लाजो के मुख पर एक चमक-सी आ गयी। लाजो ने सिर हिला कर कहा—"नहीं।" और फिर सोचने लगी "पूरो को यह कैसे पता लगा कि मैं यहां रह रही हूँ? वह मुझे क्यों ढूंढने आयी? वह किस गाँव में रहती है? मैंने उससे कुछ भी न पूछा। पूछने का समय भी कहा था।"—"आज रात··· ··आधी रात को·····"फिर यह ध्वनि लाजो के कानों से उठ कर उसके कानों में ही समाने लगी।

"मैंने कहा, एक मुट्ठी मोठ डाल कर बटलोई में चावल चढ़ा दे : मैं तो थक गयी" कहते-कहते बुढ़िया चारपाई पर निश्चल लेट गयी।

जिस प्रकार अन्तिम बार के काम को कोई जल्दी-जल्दी निबटाता है, उसी प्रकार लाजो ने उठ कर मोठ चुने, चावल चुने और चूल्हे में दो-चार लकड़ियाँ लगा कर खिचड़ी पकने धर दी। पहले प्रायः बुढ़िया आटा गूधती थी, पर आज स्वय ही लाजो ने आटा छाना और गूध लिया।

आज का दिन टूटे हुए जूते की भाँति बढता ही जाता था। मुश्किल से करके रात आई। आज जब बुढ़िया का लड़का घर आया तो लाजो को बहुत कड़ुवाहट न चढी। पहले रोज़ जब लाजो उसे देखती थी उसे लगता था मानो सैकड़ों ठोकरे उसके माथे पर टूटने लगे हों।

बटलोई में कड़छी घुमाते हुए आज तीन बार लाजो के हाथ से कड़छी छिटकी। दो बार उसके हाथों से बेलन छूट-छूट गया। एक दो बार तो उसके हाथ से काँसी का कटोरा भी छूट गया।

"ढग से काम कर" एक-दो बार बुढ़िया ने खिजला कर कहा।

"आँखे है कि बटन" बुढ़िया के बेटे ने भी उसे टोका।

पर आज लाजो को बुढ़िया का एक बोल भी कुबोल न लग रहा था। बुढ़िया के बेटे की बात आज जैसे वह सुन ही नहीं रही थी। उसे लग रहा था, मानो घर का सब माल असबाब भी आज बुढ़िया और उसके बेटे का मुह चिढ़ा रहा हो!

लाजो में आज अपूर्व साहस आ गया था। न उसका जी डरता था न उसके मन मे कोई चिन्ता आती थी। बस, एक निश्चित समय, जैसे निकट, और निकट आता जा रहा था। अभी रात पड़ जायेगी, अभी सब सो जायेगे, और जैसे साबुन लगे हाथ मे से चूड़ी निकल जाती है, वह इस घर मे निकल जायेगी।

पहले लाजो जलती-कुढती उठ कर शराब की बोतल बुढ़िया के बेटे के आगे लाकर धर देती थी, पर आज लाजो स्वयं ही भीतर से वह शराब की बोतल निकाल लायी जो बुढ़िया के बेटे ने इलायची डलवा कर दुगनी आँच की खिचवायी थी और पुरानी और तेज होने के कारण अलग रखी हुई थी।

बुढ़िया का बेटा सोच रहा था, आज लाजो ने मोठ की खिचड़ी भी मलाई जैसी बनायी है, आज लाजो दारू की बोतल भी स्वयं निकाल लायी है, आज लाजो खुश है, आज·····।

बुढ़िया झपकियाँ ले रही थी।

"आगन मे ठड हो गयी है, मैंने तेरी खाट भीतर डाल दी है, जा भीतर जा कर लेट।" लाजो ने घर की मालकिन की भाँति बुढ़िया से कहा। एक बार बुढ़िया ने आखे फाड़कर लाजो की ओर देखा।

"आज तो जैसे दिन ही पलट गये हैं। आज तो मै इसे जन्तर पहनाने वाली थी, यह तो पहले ही असर हो गया दीखता है।" बुढ़िया ने अपने मन ही मन सोचा और भीतर जाकर लेट गयी।

रात का अधकार पल-पल गहरा होता जा रहा था। बुढिया का बेटा शराब मे धुत होकर लाजो की बाहें खीच रहा था।·····

रात का पहला पहर कब का बीत गया था। बुढ़िया का बेटा शराब मे धुत होकर खाट पर सो रहा था।

उस घर की दीवारो ने, उस घर की कडियो ने जहाँ पहले इतने परिवर्तन देखे थे, उस आधी रात को यह भी देखा कि लाजो दबे-पाँव ड्योढी का दरवाजा खोल कर उस घर की देहली से बाहर निकल गयी।

लाजो थोड़ी दूर चलती, उसे डर लगता, शायद कोई उसके पीछे-पीछे आ रहा है, किसी ने उसे कंधे से पकड़ लिया है, किसी ने उसे गर्दन से नाप लिया है। जाड़े की आधी रात की ठंड में भी लाजो के

माथे पर पसीने की बूंदें आ गयी थी।

यद्यपि अमावस की रात थी, फिर भी आकाश पर छिटके हुए तारों का प्रकाश भी लाजो को तीखा लग रहा था। अपने घर की दीवार लाँघने के बाद अगले घरों के रास्ते पर बढ़ते हुए लाजो एकाएक ठिठक गयी। लाजो ने गर्दन घुमाकर अपने घर की लम्बी दीवार को ओर देखा। कोहरे की भाँति सारी गली में चुप्पी जमी हुई थी। फिर भी लाजो ने गली का सीधा रास्ता छोड कर घरों के पिछली ओर वाला लम्बा रास्ता पकड लिया।

घरों की पंक्ति समाप्त हो गयी। बाहर के कुएं तक पहुचने के लिए एक लम्बा-चौडा मैदान पड़ता था। यहां लाजो के नगे पैरो से एक कम्पन उठकर उसके माथे को नसों मे फैल गया। लाजो ने पीछे मुडकर कब्रों की भाँति सोते हुए घरों को देखा। अभी तक प्रलय नहीं हुई थी, अभी तक कब्रों मे से कोई मुर्दा नही उठा था। लाजो को अपनी साँस की आवाज भी सुनार की धौंकनी की भाँति सुनायी दे रही थी। पर लाजो के पास विचारों में डूबने के लिए समय ही कहाँ था। लाजो ने एक बार तारों के धुँधले प्रकाश को देखा, और मैदान में आगे बढ गयी।

लाजो के दिल को एक यह धड़का था कि मैदान मे से जाते समय उसे दूर से कोई भी देख सकता था। लाजो के शरीर पर कपड़े भी कुछ सफेद ही थे, उसे मैले अंधकार में अपने कपड़ों के सफेदी से भी डर लग रहा था। पर अब तो लाजो ने पूरा मैदान पार कर लिया था। उसने घूम कर पीछे देखा। सारा मैदान खाली था। कुएँ की ओर देखते ही लाजो का जी घबरा उठा। कुएँ पर कोई नही था। रशीद नहीं आया, अब वह कहीं की न रही। गाँव लौटने का विचार लाजो के लिए असह्य था। उसने कुएँ का एक चक्कर लगाया, मानो अपने मन में धार

लिया हो कि यदि अब इस ससार में उसे कोई जगह न मिली तो वह इसी कुएँ में डूब जायेगी।

चादर में अपने को लपेटे हुए एक व्यक्ति पास की झाड़ियों में से निकला। "बहन, क्या तू लाजो है?" उस व्यक्ति ने लाजो के पास आकर चादर में से अपना मुँह बाहर निकाला।

"भाई, मेरी निशानी दिखा दे।" लाजो ने रशीद को ओर एक दृष्टि देखा। रशीद के चेहरे पर मानो करुणा की मोहर लगी हुई थी। लाजो का चित्त स्थिर हुआ। रशीद ने अपने हाथ की अंगूठी लाज़ो के आगे कर दी।

"तुझे पहुँचा कर कल या परसों पूरो को ले जाऊंगा, बच्चे उसी के पास हैं।" रशीदा कुएँ को मन पर से उतर कर झाड़ियों के पीछे बंधी हुई घोड़ी खोल लाया।

"या अल्ला!" रशीद ने एक बार कहा और लाजो को बाँह का सहारा देकर घोड़ी पर बिठा लिया।

घोड़ी को पहली एड लगाते हो रशीद को वह समय याद आ गया जब उसने पूरो को छत्तोआनी के कच्चे रास्ते से उठा कर अपनी घोड़ी पर डाल लिया था। रशीदा आज हैरान था, उसे फिर एक बार अपनी घोड़ी दौड़ानी पड़ी। गाँव की एक और नवयुवती फिर एक बार भगानी पड़ी। जवानी का वह उत्साह आज रशीद की बांहों में नहो था। पर रशीद सोच रहा था पूरो को उठाने के बाद ज्यों-ज्यों वह अपनी घोड़ी दौड़ाता जाता था, मनों भार का एक पत्थर जैसे उसकी आत्मा पर बैठता जाता था, कई वर्षों से वह बोझ उसकी आत्मा पर पड़ा रहा था, आज ज्यों-ज्यों रशीद की घोड़ी रत्तोवाल की सीमाओं को दूर छोड़ती जाती थी, रशीद को लगता था कि उसकी आत्मा पर पड़ा वह भारी बोझ सरकता जा रहा है, घोड़ी को मानों पंख लग गये थे।

हमीदा

भोर के फैलते हुए प्रकाश के साथ ही लाजो के गुम हो जाने की खबर गाँव भर में फैल गयी। अभी दही में मथानियाँ पड़ी ही हुई थीं कि हर घर में लाजो की चर्चा होने लगी।

आस-पास के गाँवों में किसी हिन्दू का नाम निशान तक नहीं था, और कोई मुसलमान यह काम क्यों करता। लोग हैरान-परेशान थे।

प्रकाश जल्दी-जल्दी बढ़ कर चढ़ी हुई धूप बन गया था। उपलों के चूल्हों में दाल पक चुकी थी, स्त्रियाँ अभी तन्नूर गर्म कर रही थीं जिनमें से जलती हुई छिपटियों की सुगन्ध और धुएँ की लपटें निकल कर सारे गाँव पर छा रही थी। तभी पूरो ने गाँव में प्रवेश किया।

आज लाजो-हर के घर का दरवाजा किसी मृत पशु के मुँह की भाँति खुला हुआ था। पूरो ने जब उस घर के दरवाजे के भीतर पैर धरा, आँगन में बिखरे हुए रात के झूठे बरतनों पर मक्खियाँ भिनक

रही थी। पूरो ने देख लिया कि आज सवेरे से किसी ने कुछ खाया पिया नही है।

"अरी, तूने कही उस कलमुंही को देखा ?" बुढ़िया के माथे पर इतनी तेवरियाँ चढ़ी हुई थी, कि जान पड़ता था जैसे किसी ने मिट्टी की हाँडी उसके माथे पर फोड़ डाली हो।

"कौन अम्मा ?" पूरो ने अपने सिर पर से खेस उतार कर आँगन मे धरते हुए पूछा।

"अरी, वही चांडाल, अल्ला उससे समझे" बुढ़िया ने फिर अपनी सारी घृणा अपने माथे के बलो में भर कर कहा।

"हाय, हाय, कौन ? बहू कहाँ है ?"

"वही जलजानो तो भाग गयी है।"

"हाय, हाय, किसके साथ ? मै तो उसके लिए जन्तर और भस्म लेकर आयी हूँ।"

"चूल्हे मे जायें जन्तर और भसम! उसे तो न जाने जिन ले गये या भूत।"

"क्या कहती हो, अम्मा! गाँव में कौन है जो ले जायेगा। बाहर खेतो मे गयी होगी, आ जायेगी अभी।"

"लो सुनो! खेतों में गयी है! धूप सिर पर आ गयी और···"

"पर अम्मा! वह कोई रोटी का टुकड़ा तो नही जिसे कौवे उठा कर ले गये।"

"यही तो मै कहती हूँ। क्या जाने किसी कुए में डूब मरी है, क्या जाने किसी जोहड़ में गिर पड़ी है।·····मै तो पहले दिन से ही उस पर भरोसा नही करती थी। पर यह लड़का ही उसके चोचले किया करता था, कहता था, अम्मा! अब यह कहां जायेगी, इसका कोई सगा न पराया·····।"

"क्यों, अम्मा ! उसके माँ-बाप किस गाँव के हैं ?"

"भाड़ में जायें माँ-बाप। मैंने तो पहले दिन ही कहा था, ऐसे परायी ईंटों से घर नहीं बसते। पर उसका तो दिल जो आ गया था, बुढ़िया की कौन सुनता था।.....ले, अब तुझसे क्या छिपा है, सारा गाँव जानता है, यह हिंदुओं की बेटी थी, जब गाँव से हिंदू भागने लगे, यह लड़का इसे कहीं से ले आया। अल्ला जानता है, मैं तो पहले दिन से ही कह रही हूँ, बेटिया बहुएँ सब के होती हैं, अल्ला दित्ता तू झूठमूठ को पाप की गठरी उठा लाया है, न जाने कौन से दिन यह पाप सिर से उतार सकेगे..... "

"अच्छा, यह बात थी ? तभी, अम्मा, वह पेरी हुई लगती थी। पर भाग कर जायगी कहां ? यहां उसका कोई आस-पास का तो है नहीं। कौवों से बचेगी चीलों में फंसेगी। मैं समझती हूँ वह किसी कुएँ-खाई में गिर-गिरा पड़ी है, चाहे वह जान कर मरी है, या फिर उसकी ऐसे ही आयी हुई थी।"

"हम पर से कलंक तो हटा। पर लड़के ने मेरी जान खा रखी है। कहता है, तू अधी थी जो तुझे पता न लगा, वह कोई चिड़िया का बच्चा तो नहीं है जो किसी ने उसे अपनी जेब में डाल लिया।"

"पर, अम्मा, वह पहले भी कभी घर के बाहर अकेली जाती थी ?

"कहाँ ! उसे क्या मरों के पास जाना था। पहले-पहले तो जब मैं लड़के को रोटी देने जाती थी तो बाहर से ताला लगा जाती थी। फिर लड़के ने भी कहा और मैंने भी सोचा भई यह बेचारी जायगी कहां। जो किसी के सिर पर आठों पहर सवार रहो तो उसका जी घर में भी नहीं लगेगा। वह दोपहर को ही घड़ी दो घड़ी बस घर में अकेली रहती थी। कल भी मैं रोटी देकर आयी हूँ, अच्छी भली यहां बैठी हुई थी।

मोठ डालकर रात को खिचडी बनायी, बथए का साग पतीले में पकाया रोटियां सेकीं हम मां बेटों को खिलायी आप खायी, फिर मेरी चारपाई भीतर डाल गयी, कहे अम्मा आंगन मे अब ठड हो गयी है, लड़के ने जरा दारू पी, फिर मै तो सो गयी, फिर पता नहीं कैसी होनी किस समय हो गयी। सवेरे उठी हूँ तो मैने आवाज़ें दी, पर कोई हो तो बोले·····।"

"मैने कहा, कुए जोहड दिखवाये है या नही ? वह किसी के साथ निकल जाने वाली तो दिखायी नही देती थी।"

"जाना भी किसके साथ था ! ···" बुढ़िया ने अपने सिर को अपने घुटनों पर रख लिया।

"बड़े अचरज की बात है। मांस की बोटी तो थी नही कि कुत्ते बिल्ली ने उसे मुंह मे डाल लिया। गाँव तो सारा तुमने ढुंढवा लिया होगा ?"

"हा, सवेरे से गाव का एक-एक आदमी यहाँ आ चुका है। लोगो ने चप्पा-चप्पा भूमि छान मारी है। इस समय तो मेरा अल्लादित्ता और गांव के कुछ लड़के कुएँ पर गये हुए हैं। जो कहीं मरी हुई की लाश भी मिल जाय तो लड़के के मन में यह तो न रह जायगा कि न जाने कहाँ गयी। लड़के की जान सलामत रहे, औरतें और बहुतेरी·····।"

अब तक पूरो के मुख पर हर्ष और शोक के भाव उतरते चढ़ते रहे थे अब दो तीन आदमी बाहर से आ गये।

"हम तो सारे कुएं-खायी देख आये है, उसकी तो कही हड्डी पसली भी नहीं मिलती।" कह कर तीनों आंगन में पड़ी खाटों पर बैठ गये।

"खाये अपने माँ-बाप को ! तूने क्यों अपनी जान को रोग लगा लिया है। उठा लिया होगा भूत प्रेतों ने।" बुढिया ने अल्लादित्ता

को ओर मुख कर के बडे प्यार से कहा। पूरो ने समझ लिया, यही अल्लादित्ता है।

पूरो को लाजो का उतरा हुआ चेहरा याद आ गया, और उसे लगा मानो लाजो का मुँह उस चिड़िया के पिंजर की भाँति हो जो इस गलीज़ चील के पंजो मे कई दिन तक फसी रही हो।

"मेरी समझ मे तो वह रात बिरात उठ कर बाहर गयी है, और उसे कोई जानवर उठा ले गया है" उनमे से एक ने अल्लादित्ता की ओर मुँह कर के कहा।

"यहाँ तो कोई गीदड लोमड़ी भले ही फिरती हो, और इस गाँव के पास कौनसा जानवर आया होगा" दूसरे ने पास बैठे हुए कहा।

"हमारी तरफ़ से चोर ले गये, ले जाये। तू उठ कर दो कौर तो मुँह मे डाल।" बुढिया ने अपने पुत्र को दिलासा देने के लिए कहा और उठ कर रोटी-टुकड़े का प्रबन्ध करने लगी।

"अच्छा, अम्माँ ! अल्ला, तेरे जी को शान्ति दे, मैं चलती हूँ।" पूरो ने खेसो को बधी-बंधायी गठरी सिर पर उठाली।

"मैंने कहा तू कौन है ?" अल्लादित्ता ने पूरो की ओर घूर कर देखते हुए कहा। अब तक पूरो को गाँव की ही कोई स्त्री समझते हुए अल्लादित्ता ने ध्यान नही दिया था, पर खेसों की गठरी उठाते हुए उसे देखकर अल्लादित्ता ने उससे घुड़क कर पूछा।

"यह कौन है ? खेस बेचती है, और कौन है ?" पास से ही बुढ़िया ने उत्तर दिया।

"मैंने पहले तो तुझे कभी नहीं देखा इस गाँव में ?" अल्लादित्ता ने सन्देह पूर्वक पूछा।

"कितने दिनो से तो बिचारी यहाँ बेचती फिरती है" बुढ़िया ने फिर लड़के को डाँटते हुए कहा।

"पर तू किस गाव से आयी है ?" अल्लादित्ता ने पूरो की ओर मुख कर के कहा ।

"दो बालक मेरी गोदी मे है, गाँवों मे घूम-घूम कर दो-चार पैसे कमा लेती हूँ ।" पूरो का मन कर रहा था कि किसी प्रकार पख लगा कर वहाँ से उड जाय । क्यो वह गाँव मे रह गयी ? रात को वह भी साथ चली जाती तो कौन उसका पता लगा सकता था ।

"पर तू हिन्दू है कि मुसलमान ?" अल्लादित्ता का शक अभी तक दूर नही हुआ था । उसके दोनो साथी मुस्कराने लगे ।

"क्यो भाई, क्या सलाह है ? क्या अब इसे घर मे डालोगे ?" अल्लादित्ता के एक साथी ने उसे चुटकी काटते हुए कहा ।

"क्या कहते हो, भाई ! मै यहाँ हिन्दू कहाँ से आयी ।" और पूरो ने परे पड़ी हुई जूती को अपने पाँव मे अडाया और गठरी सभाल कर बाहर जाने लगी ।

'हिन्दू का नाम उसके माथे पर तो लिखा हुआ नही होता ।" अल्लादित्ता ने फिर जोर से कहा ।

"तेरा तो, भाई, शक दूर ही नही होता, यह देख मेरा नाम हमीदा है" और पूरो ने दलहीज़ में खड़े-खडे अपनी बाईं बाँह पर गुदा हुआ नाम दिखा दिया ।

"जा भई, जा, इसका तो सिर फिरा हुआ है ।" बुढिया ने दूर से कहा ।

"मुझे अगर कुछ पता चला तो मै आप आ कर बताऊँगी, अम्माँ !" कहते-कहते पूरो तेज़ क़दमों से गली में हो ली । बावली वाली कोठरी में पूरो ने अपने दोनों बालक छोड़े हुए थे । जावेद अब सयाना हो चला था, वह छोटे लड़के को बहलाये रखता था ।

पूरो ने वह रात घड़ियाँ गिन-गिन कर काटी । दूसरे दिन सवेरे

रशीद लाजो को सक्कड़आली अपने घर छोड़ कर पूरो के पास लौट कर आने वाला था। वही रात रत्तोवाल मे पूरो की अन्तिम रात थी। पूरो तारे गिनती दोनो बालकों को ले कर चारपाई पर पड़ रही।

आज रत्तोवाल में पूरो की सारी मनोकामनायें पूरी हो गयी थी। पूरो को पिछली बार रत्तोवाल आने का ध्यान आया, खेतों में, क्यारियों में, अपना घूमना याद आया। फिर अन्तिम दिन रामचन्द का खेत में मिलना याद आया.....पिछली बार पूरो ने रामचन्द के खेत देखे थे.....इस बार पूरो ने रामचन्द का वह घर, वह आँगन, भी देख लिया जिसे देखने की लालसा उसे वर्षो से थी। पूरो सोचने लगी, इस घर में उसको घर की बहू बन कर आना था, इस घर में उसकी बहन ब्याह कर आयी। इस घर मे उसका भाई बरात ले कर आया, पर उसने इस घर का मुँह कब देखा जब कि इस घर में घर वालों की छाया भी शेष न रही। इस घर के जबड़ों मे उसने केवल लाजो का पिजर देखा.....शुक्र है लाजो की कैद अब खत्म हो गयी थी।" पूरो फिर सोचने लगी—"आज तो वह आप ही उस घर के पिंजरे में फसी हुई थी, 'हमीदा' नाम ने उसे बचा लिया।"

पता नही किस समय पूरो की आँख लगी और रात का अन्धकार धीरे-धीरे सवेरा बन गया।

सक्कड़आली में

आने जाने का पूरा इक्का करके रशीद रत्तोवाल आया और पूरो को लेकर सक्कड़आली लौट गया।

लाजो की दोनों बड़ी-बड़ी आंखें मानो बन्द दरवाजे पर ही लगी हुई थीं, उसने पूरो-हर के पहुँचने के पहले ही खड़ाक से बन्द दरवाजे का कुंडा खोल दिया रशीद ने एक ताला बाहर से लगा दिया था कि जिस से गांव के लोगों को शक न पड़े। ड्योढ़ी का दरवाजा अंदर से बन्द कर के पूरो, लाजो और रशीद अपने मकान की सबसे पिछली कोठरी में एक बार तो ऐसे बैठ गये मानो शेर से डरे हुए हिरनों की डार को कोई नयी खोह मिल गयी हो।

लाजो और पूरो दोनों को लगा मानो वह साथ खेली हों, साथ पली हों, दोनों एक दूसरे की आत्मा हों, पर समय के फेर के कारण वर्षों के लिए बिछड़ गयी हों और आज किसी तूफान के बाद, किसी

आंधी के बाद दोनों फिर अपने आप मिल गयी हों, वर्षों के विरह और जीवन की कहानियाँ दोनों के होठों पर जम कर रह गयी हों। दोनों ही अपनी-अपनी कहने को व्याकुल थी, दोनों ही एक दूसरे की सुनने को व्याकुल थी।

खाने पीने से निबटते-निबटते दिन अच्छी तरह चढ गया था। रशीद यह बात समझता था कि दोनो को अकेले मे बैठ कर एक दूसरे से अपने दिल की कह सुन लेनी चाहिए। वास्तव में आरंभ से ही रशीद दिल का खोटा नही था। वह सोचता था, पूरो के साथ उसके कुछ लेने देने के हिसाब थे, नही तो वह इतना बुरा आदमी नही था कि रास्ता चलती किसी की शरीफ बहन बेटी को जबरदस्ती अपने घर में डाल लेता। पूरो को अपनी स्त्री बना लेने के बाद रशीद ने कभी आख उठाकर किसी की बहन बेटी को नही देखा था।

दोनो बालको को लिटा कर दोनो जनी भीतर वाली कोठरी मे खाट डाल कर लेट रही। रशीदा उस दिन साथ के बरामदे मे सोया।

"रत्तोवाल का काफला इसी गाँव से गुजरा था," पूरो ने ही बात चलायी।

"तूने देखा था?" लाजो और पूरो अभी तक मिल कर नही बैठ सकी थी। लाजो को कुछ पता न था कि पूरो ने उसे क्यों और कैसे ढूंढ निकाला।

"मै तेरे भाई से मिली थी, तभी तो मुझे तेरा पता लगा।"

"हे?..."

"हां!" और काफ़ले के दिन वाला रामचन्द का मुख पूरो की आँखों के सामने आ गया।

"तू ने उसे कैसे पहचाना ? तू ने तो उसे कभी देखा भी न था" लाजो के मन में अनेक बातें उठ रही थी, कैसे पूरो की उसके भाई के साथ सगाई हुई थी, कैसे उसके भाई का विवाह रचा जाने वाला था, कैसे फिर पूरो एकाएक गुम हो गयी थी, फिर पूरो की छोटी बहन उसके भाई को ब्याही आयी थी।

"मैंने उसे एक बार पहले भी देखा था", पूरो ने रत्तोवाल के खेतों वाली बात लाजो को सुनायी। पूरो ने यह भी बताया कि उस समय तक उसे यह पता न था कि रामचन्द उसका बहनोई बन चुका है।

"मुझे कभी भी कोई खैर खबर नहीं मिली। केवल जिस दिन काफला इधर से गुजरा .....मरे हुओं को भी लोग याद करते हैं उनके नाम से श्राद्ध लिखाते हैं, कभी-कभी घर में कोई मेरा नाम भी ले लेता होगा ?" पूरो का गला भर आया।

लाजो ने उसे बताया कि उसका पिता दो साल हुए मर चुका था, उसकी माँ कई बार उसका नाम ले लेकर रो लेती थी।

"मेरी मा के करम, भी उसकी जीते जी मर गयी, और बहू भी।" पूरो ने कहा, और पूरो और लाजो दोनों रोने लगी।

बुच्चड़खाने की गउओं की भाँति दोनों अपनी चारपाइयों की पट्टियों से लगी पड़ी रहीं।

"तू जब वहां जायगी, मेरी माँ से मिलेगी तो उससे कहना कि एक बार मुझ जीती का मुँह तो देख ले....." पूरो ने और भी रोकर कहा।

"मैं...मैं वहां कहां जाऊँगी..."

"तू अपने घर जायेगी, अपने पति के पास, अपने भाई के पास।"

"मैं तो जीती मर चुकी हूँ, मुझे अब कौन कबूल करेगा ?"

"नहीं लाजो, मैं अपने जीते यह अन्याय न होने दूंगी। तू अपने घर जायेगी। तेरा इसमें क्या दोष है?"

"पर तेरा ही क्या दोष था? तुझे आज तक घर वालों ने न बुलाया।"

"मेरी बात और थी, लाजो!"

"तेरी बात और कैसे थी? तू क्या अपनी मरजी से आयी थी? तू भी तो।"

"हाँ, लाजो! पर तब मैं अकेली थी। मेरे माँ-बाप को साहस न हुआ कि वे लोगों की बातें सुन सकें, और उन्होंने अपनी ममता को अपने से अलग तोड़ कर फेंक दिया। अब किसी एक को नहीं, सबके कलेजे पर लगी है।"

"नहीं, पूरो! मेरी किस्मत अच्छी होती तो पहले ही मेरे साथ यह अत्याचार न होता। मैं जानती हूँ मुझे कोई लेने नहीं आयेगा।"

"मैं कहती हूँ तेरे भाई का पत्र जरूर आयेगा। हम तेरा पता देंगे और वह तुझे लेने जरूर आयेंगे। मेरा भाई देखने में कैसा लगता है?"

पूरो ने एक हिरस से पूछा।

लाजो को अपने पति का ध्यान आ गया। वह कैसे उसका मुख देख सकेगी, वह कैसे घर वालों के सामने पड़ सकेगी,—लाजो सोचने लगी। पर लाजो के दिल में मानो विश्वास था कि उसे लेने कोई नहीं आयेगा, वैसे मन के लड्डू वह जितने चाहे फोड़ ले।

"नहीं, लाजो! कोई न कोई तुझे लेने जरूर आयेगा। आज किसी को किसी से शिकायत नहीं, सब अपनी बेटियों बहनों को ले जा रहे हैं। रशीद कहता है उधर से भी ढूंढ-ढूंढ कर लोग अपनी स्त्रियों को वापस ला रहे हैं, कइयों के तो बच्चे भी हो गये हैं। "और फिर दोनों की दोनों गुम-सुम होकर स्त्रियों की इस विवशतापर विचार करनेलगीं।

लाजो सोचने लगी, आज तक उसके घर कोई बाल-बच्चा नहीं आया था, पता नहीं उसमें क्या दोष था। आज यही दोष उसे फला, नहीं तो न जाने उसको क्या दुर्दशा होती।

"जहाँ वे एक के लिए रोते हैं, अब दो के लिए रो लेंगे। मैं कहीं नहीं जाऊँगी, पूरो! मैं क्या मुँह लेकर जाऊँगी? मैं तेरे बालकों की टहल करके रोटी खा लूंगी।"

"ऐसे क्यों कहती है, लाजो! मेरे घावों पर नमक मत छिडक। यह तेरा अपना घर है। पर, लाजो! वे तुझे जरूर ले जायेंगे। मैं सारी दुनिया का वास्ता देकर उन्हें मना लूंगी।"

पूरो ने लाजो को अपनी बाँहों में कस लिया।

"तू अपने घर मजे में है, पूरो?"

"रशीद का पीठ पीछा है। पहला गुनाह जो उसने किया सो तो किया, पर उसके बाद उसने मुझे कभी बुरा-भला नहीं कहा। वह मेरे साथ न होता तो मैं तुझे खोज कर कैसे ले आती?"

"मुझे ले आने में उसने अपनी जान बड़ी जोखिम में डाली। जो कहीं उस राक्षस को पता चल जाता तो वह मेरी हड्डियों को फूंक कर ही पानी पीता·····"

"वे कहाँ फूंकते हैं बावली! वे लोग तो गाड देते हैं।"

"कुछ सही, पर, पूरो, कहीं वह इस गाँव का पता तो नहीं लगा लेगा? मेरा तो जी डरता है, कहीं तुम्हारा बसा हुआ घर न उजाड दूँ।"

"अभी तक तो उन्हें तेरी परछायी का भी पता नहीं लगा है," और पूरो ने लाजो के खो जाने के बाद बुढ़िया और बुढिया के बेटे से अपने मिलने की सारी बात कह सुनायी।

"पहले भी इसी पिछली कोठरी में कई दिन तक मैंने एक हिन्दू

लड़की छुपा कर रखी थी। किसी को उसकी हवा तक न लगने दी। फिर उस दिन मैं उसे काफ़ले में छोड़ आयी। तुझे भी यहाँ भीतर चोरी-चोरी रखूँगी, ताकि गाँव में कहीं कुछ बात न उड़ जाय। जिस दिन ख़त-पत्र आ गया, तुझे चुपके-से ले जाकर लाहौर छोड़ आयेंगे। किसी को कानों कान ख़बर भी न होगी।"

"और जो उनका पत्र न आया·····"

"मेरा दिल गवाही देता है, लाजो! तेरा भाई अवश्य पत्र डालेगा।"

हिचकोले

दिन पर दिन बीतते गये, भोर होती, साँझ होती। न लाजो की खबर घर के बाहर निकली, न लाजो के घर वालों की कोई खैर-खबर आयी। वैसे पूरो और लाजो हर घड़ी साथ रहती थीं। रात को जब उनकी आँखों में नींद घुल जाती, दोनों की आँखों में सपने ही सपने बिखर जाते थे। मुंह-अंधेरे उठकर वह बातें करने लगती, सपनों के शकुन अपशकुन विचारतीं। कभी उनका मन चक्कर में पड़ जाता, कभी उनका मन स्थिर हो जाता। कितनी ही बार लाजो बालकों की भाँति चूल्हे में से कोयला निकालकर धरती पर लकीरें खींचने बैठ जाती, कभी शकुन शुभ निकलता, कभी अशुभ। कभी बातें करते लाजो की आँखों से आँसुओं की धाराएँ बह निकलतीं, कभी वह पूरो के बच्चों के साथ खेल कर अपना जी बहला लेती। वैसे लाजो के मन में प्रायः निराशा-जनक बातें ही उठा करती थीं। उसे आशा नहीं थी कि कभी कोई

उसकी खबर लेगा। पर पूरो के मन को अन्दर से न जाने कौन बढ़ावा देता था कि किसी दिन चुपके से कोई आ पहुँचेगा, किसी दिन अचानक ही कोई खत-पत्र आ जायेगा, लाजो के दिन फिर जायेंगे। पूरो ने अपनी ओर से लाजो का आतिथ्य सत्कार करने में कोई कसर न उठा रखी थी। वह सोचती थी कि लाजो थोड़े दिनों के लिए धरोहर के रूप में उसके पास है, फिर शायद वह उससे कभी न मिल सकेगी, उसे कभी न देख सकेगी, सबों के मुख भी उसे उस समय केवल लाजो की मुखाकृति में ही दीख पड़ते थे। कौन उसके घर रहने के लिए आयेगा, कौन उसे मिलने के लिए आयेगा। उसके अपने सम्बन्धियों में से लाजो ही उसके घर की प्रथम तथा अन्तिम अतिथि थी।

दिन के प्रकाश मे लाजो ने कभी ड्योढ़ी न लाँघी थी। रात के अधकार ने लाजो का भेद बड़े ही ध्यान से सुरक्षित रखा था। पर गाँव के डाकिये ने तीन पैसे वाला कार्ड भी उसके आँगन मे न फेंका।

लाजो और पूरो के मुख पर चिन्ता की रेखाएँ दीखने लगीं। लाजो के मन को केवल एक यह सन्तोष अवश्य था कि पूरो और रशीद ने कभी उसे जी छोटा करने न दिया। पर सारा-सारा दिन छिपे हुए, दबके हुए लाजो सोचती कि पहाड़ जैसी उमर उसके सिर पर लटक रही है, कब इस प्रतीक्षा के दिन पूरे होंगे।

पूरो का किसी से बहुत आना-जाना नहीं था। लाजो पिछली कोठरी में ही उठती बैठती थी। दोपहर को कभी-कभी दोनों जनी बाहर का कुंडा लगा कर चरखा कातने बैठ जाती थीं। दिन बीत जाता था, पर उनकी चिन्ता न बीतती थी।

जाड़ा बीत चुका था। फागुन का भी पिछला पक्ष आ गया था। पानी मे ठंड न रही थी। एक दिन ढलती दोपहरी के समय जब रशीदा ड्योढ़ी लाँघ कर घर आया तो लाजो और पूरो को देखते ही उसकी

आंखें डबडबा गयी।

सहमी हुई दोनों उसके पास आयी। कई मिनट तक वह कुछ न बोल सका। लाजो को लग रहा था, कोई उसके कलेजे को बाहर खींच रहा है। उसे एक यही डर था कि कहीं रत्तोवाल की बुढ़िया और उसके बेटे को लाजो का पता लग गया है, वह उसे जबरदस्ती घसीट कर ले जायेंगे, पता नहीं, पूरो-हर पर क्या बीते।

रशीद चारपाई की पट्टी पर बैठ गया, कुरते की बाह से दोनों आंखें पोंछ कर उसने लाजो की पीठ पर प्यार से थपकी दी। उसके हाथों में वही प्रेम था जो एक बुजुर्ग पिता को लड़की को ससुराल भेजते समय होता है। रशीद का दिल भर आया था, उसने अपने मन को स्थिर करके कहा : 'आज रामचंद आया है।"

"यहां ?" लाजो और पूरो एक साथ बोल उठीं।

"हां, साथ में हिंदुस्तान पुलिस के कुछ सिपाही हैं, कुछ पाकिस्तान के। लोग इसी तरह गावों और शहरों में खोई हुई लड़कियों को ढूंढ रहे हैं। रामचंद मुझे अकेले में भी मिला था।" रशीद कह रहा था।

"सचमुच मुझे लेने आये हैं ?" लाजो के मुख से अकस्मात ही निकल गया, पर फिर वह स्वयं ही लज्जित-सी हो गयी। उसे लग रहा था मानो उसने कोई अनावश्यक प्रश्न कर दिया हो।

"पगली कहीं की, और वह यहां क्या करने आये हैं ?" रशीद ने कहा।

पूरो अभी तक चुप बैठी थी। उसे अपने अन्तस्तल में एक अपूर्व प्रसन्नता का अनुभव हो रहा था क्योंकि उसका विश्वास सत्य सिद्ध हुआ था। वह जानती थी रामचंद आयेगा, वह जानती थी उसकी भाभी अपने ठिकाने पहुँच जायेगी। लाजो तो व्यर्थ ही दिल हार बैठती थी। जिन दिनों रशीद भी निराश-सा हो जाता था, पूरो के मन में मानो

कोई गवाही देता था कि रामचंद अवश्य आयेगा। सो आज वह दिन आ गया था। रामचंद सचमुच ही आ गया था।

"क्या अकेला आया है ?" लाजो ने पूछा।

रशीद समझ गया कि लाजो के इस प्रश्न का क्या अर्थ है।

बोला, "हाँ, अभी तो अकेला ही आया है। पर तू चिन्ता न कर। तेरे घर के सब के सब तुझे सिर-आँखों पर बिठला कर ले जायेंगे।"

लाजो के मन को कुछ सन्ताप हुआ।

"तेरा नाम सुन कर, तेरी खबर सुन कर रामचंद रोता ही रहा, उसके आँसू किसी तरह थमते न थे। उसे देखता था तो मेरा जी भी भर-भर आता था।" रशीद की आँखें फिर भर आयीं। लाजो और पूरो रोने लगीं।

"मैंने उन्हें अच्छी तरह समझा-बुझा दिया है। आज तुझे यहाँ पर इसी तरह दे देने से सारे गाँव को खबर हो जाती। कौन जाने बात रत्तोवाल तक भी पहुँच जाती। मैंने उनसे कहा है, तुम वापस लाहौर चलो, मैं लड़की को लेकर लाहौर पहुँचता हूँ, वहाँ तुम्हारे हवाले कर दूँगा।"

"यह अच्छा किया" पूरो ने कहा।

"हम वहाँ आज से पाँचवें दिन पहुँचेंगे। तब तक वह अमृतसर से पूरो के भाई को भी बुला लेंगे। मैंने सोचा एक बार पूरो भी अपने भाई से मिल लेगी।" रशीद लाजो की पीठ पर प्यार से हाथ फेरता हुआ कह रहा था।

पूरो की विदा हुई रुलाई निकल गयी। लाजो ने पूरो को गोदी में सिर रख कर उसे अपने से चिपटा लिया। दोनों एक दूसरे में खोयी हुई थीं, दोनों एक-दूसरे के दुख की साझीदार हो गयी थीं, दोनों के आँसू आपस में मिल गये थे।

लाहौर का रास्ता मुश्किल से कोई डेढ़ दिन का था। यहाँ से चलने में अभी पूरे तीन दिन रहते थे।

अगले दिन पूरो ने बेसन मँगवाया, इकट्ठा किया हुआ भैंस का मक्खन निकाला, बादाम और मेवा डाल कर पूरो दिन भर लड्डू बनाती रही। जैसे लड़कियों को ससुराल बिदा करते समय किया जाता है, पूरो ने एक रेशमी जोड़ा निकाला। लाजो को वह बार-बार अपने गले से लगाती, बार-बार उससे मिल कर रोती।

तीसरे दिन दोनों बालकों को साथ लेकर पूरो, लाजो और रशीद मुह-अंधेरे ही गाँव से निकल कर रेल गाड़ी पर सवार हो गये।

पिछले चार दिन से पूरो के हृदय में अनेक प्रकार के विचार उठते रहे थे, उसकी रातें सोचते-सोचते बीती थीं। पूरो अपने मन में निश्चय करती, "मैं लाजो से कहूँगी मेरी माँ से जा कर यह कहना, मेरी मा को जा कर यह बताना, उससे कहना एक बार मुझ जोती का मुंह तो देख ले....." सोचते-सोचते पूरो का गला भर आता, सोचते-सोचते पूरो को कहने के लिए बहुत कुछ सूझता, सोचते-सोचते फिर पूरो के मुह से एक बात भी न निकलती थी।

लाजो को अपने भाई और अपने पति का मुख देखना बड़े ही अचरज की बात जान पड़ती थी, ऐसी ही जैसे कोई मर कर अगली दुनिया में बिछुड़े हुए लोगों से मिलने की आशा रखता हो। यद्यपि लाजो को अपने घर वालों से बिछुड़े हुए पाँच-छः महीने ही हुए थे, उसको लगता था कि वह एक बार मर कर इस धरती पर जीवित हो गयी है।

सारे रास्ते दोनों का मन हिचकोले खाता रहा।

एक घड़ी

पुलिस के पहरे में जब वह मिले, लाजो से अपनी पलकें उठाये न उठती थीं। पूरो ने अपने भाई के मुख की ओर देखा। मिलन की इस एक घड़ी के एक ओर चिरकाल का विछोह था, मिलन की इस घड़ी के दूसरी ओर असीम विछोह दृष्टिगोचर हो रहा था। किसी के भी आँसू थमने में न आते थे।

मरद-मानसों का जिगरा भी टूट गया था। होनी का जो यह पहाड़ उस पर टूट पड़ा था उसके आगे किसी को किसी से कुछ पूछना न रह गया था। रो-रो कर उन्होंने अपने हाथ भिगो लिये, रो-रो कर उन्होंने अपने कपड़े भिगो लिये।

"सुनना जी! कभी भूल से भी लाजो का निरादर न करना" सब से पहले पूरो बोली।

लाजो के पति का मुंह नीचा था, लाजो के भाईका मुंह नीचाथा।

"पूरो, हमें लज्जित न कर।" लाजो के भाई ने कहा।

लाजो का पति कुछ न बोल सका। शायद वह कुछ सुन भी न सका था। आज उसने केवल अपनी खोयी हुई पत्नी ही नही देखी थी, बल्कि अपने होश संभालने से पहले की खोयी हुई अपनी बहन को देखा था। बर्षो से उसके हृदय में एक आग सुलगती रही थी, जिसकी एक चिनगारी उसने रशीद-हर के खेत में लगा दी थी जिससे सब कुछ जल कर राख हो गया था। अनेकों वर्षों से वह उस राजकुमारी की कहानी के संबध में सोचता रहा था, जिसे एक दैत्य चुरा कर ले गया था और फिर पूर्व देश का एक राजकुमार उसे अपने जादू के तीरों के बल से छुड़ा कर लाया था। छुटपन में उसने कई बार साधु-सन्तों से जादू के वह तीर मांगे थे। बड़े होने पर पूरो के ध्यान मे वह व्याकुल हो उठता था। आज वर्षो की खोयी हुई पूरो उसकी आँखों के सम्मुख बैठी थी। इस घडी वह भूल गया था कि रशीद ने उसकी पत्नी को बचाया है, इस घडी उसे केवल यही याद था कि रशीद उसकी बहन को उठाकर भाग गया था।

पुलिस की लारी तैयार हो गयी। हिन्दुस्तानी पुलिस के सिपाहियो आवाज दी "उधर जाने वाले हिन्दू एक ओर हो जायें, लारी तैयार

रामचन्द रशीद को बार-बार अपने गले मे लगाया और बार-बार कहा "अ, तेरी बडी कृपा है, मै तेरा उपकार कभी नहीं भूलूंगा।" रशीद के मुख पर यह उपकार करने की प्रसन्नता तो थी, पर उसकी आँखें लाजो को बचाने के बाद भी लज्जित थी। रशीद को उठा कर भगा लाना याद आ रहा था। फिर भी उसे लग रहा था कि उसके सिर पर चढा हुआ ऋण कुछ-न-कुछ कम हो रहा था।

आवाज फिर आयी : "उधर जाने वाले हिन्दू एक ओर व जायें।"

पूरो ने वह रेशमी जोड़ा और बेसन के लड्डुओं की गठरी लाजो के हाथ में थमा दी, लाजो को कसकर अपने गले से लगाया और फिर अपने भाई से अन्तिम बार मिलते हुए उसके गले से लिपट गयी।

"पूरो !" पूरो का भाई केवल इतना ही कह सका और उसने पूरो की बाँह को कसकर पकड़ लिया।

"मेरी बात सुन, इस समय·····" पूरो के भाई ने साहस करके कहा। पूरो अपने भाई की बात समझ गयी। पूरो के मन में भी एक बार रीझ उत्पन्न हुई "जो मैं इस समय कह दूँ मैं एक हिन्दू स्त्री हूँ तो मुझे अवश्य ही वह इन सब के साथ लारी में बिठा कर ले जायेंगे। मैं भी लौट सकती हूँ, मैं भी लाजो की भाँति·····देश की हजारों लड़कियों की भाति·····"

पूरो की आँखों में रोके हुए आँसू उभर आये। उसने धीरे से अपने भाई के हाथ से अपनी बाँह छुड़ा ली और परे खड़े हुए रशीद के पास जा कर अपने लडके को उठा कर अपने गले से लगा लिया।

"लाजो अपने घर लौट रही है, समझ लेना कि इसमें पूरो भी गयी। मेरे लिए तो अब यही जगह रह गयी है।" पूरो धीरे से अपने भाई से कहा जो लारी पर चढ रहा था।

रामचन्द ने नतमस्तक हो पूरो के आगे हाथ जोडे, शायद अन्तस्तल की कोई पीडा उसके होठों पर आकर जम गयी थी, वह कुछ बोल न सका।

"चाहे कोई लड़की हिन्दू हो या मुसलमान, जो लड़की भी लौट

कर अपने ठिकाने पहुचती है, समझो कि उसी के साथ पूरो की आत्मा भी ठिकाने पहुंच गयी।" पूरो ने अपने मन में कहा, और अपनी आँखों को धरती की ओर झुका कर रामचन्द को अन्तिम प्रणाम किया।

लारी चल पड़ी थी। खाली सड़क पर धूल उड़ने लगी।